निवेदन

मेकियावली की इस पुस्तक का राजनैतिक साहित्य में अपना विशेष स्थान है। वह यूरोपियन कूटनीति का आचार्य माना जाता है। उसकी यह पुस्तक संसार की प्रायः सभी भाषाओं में अनुवादित हो चुकी है। हिंदी में इसका कोई अनुवाद नहीं था। अतएव अपने अवकाश का थोड़ा-सा समय देकर मैंने हिंदी-पाठकों के मनोरंजनार्थ इसका अनुवाद कर दिया है। अनुवाद करने की कठिनाइयाँ अनेकानेक हैं और व्यस्त जीवन में साहित्य-सेवा के लिए अवसर भी कम मिलता है। इसलिए इसमें त्रुटियाँ अनिवार्य हैं। किंतु आशा है कि इस अनुवाद से हिंदी-पाठकों को मेकियावली की विचार-धारा से परिचय करने में सरलता होगी।

मेरे आदरणीय मित्र और अध्यापक डा० रामप्रसाद त्रिपाठी ने इस पुस्तक की भूमिका लिख देने की कृपा की है। उससे पाठकों को मेकिया-वली का ऐतिहासिक मूल्य आँकने में बड़ी सहायता मिलेगी और वे आदरणीय त्रिपाठी जी के कृतज्ञ होंगे। मैं तो उनकी कृपा और स्नेह का सदैव ही पात्र रहा हूँ और इस छोटी-सी कृपा के लिए कृतज्ञता प्रकट करने में संकोच-सा अनुभव करता हूँ।

पहली जनवरी
१९४१

श्रीनारायण चतुर्वेदी

भूमिका

'शासक' नामक प्रस्तुत पुस्तक मेकियावली की प्रसिद्ध रचना 'इल प्रिन्सिप' का अनुवाद है। मेकियावली का जन्म ३ मई सन् १४६९ ई० को इटली के प्रख्यात नगर फ्लोरेन्स में हुआ था। वह एक छोटे ज़मींदार का लड़का था। उसकी पैतृक सम्पत्ति उसके साधारण जीवन-निर्वाह के लिए पर्याप्त थी। वह विना नौकरी-चाकरी के अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति अपनी ज़िमींदारी की आमदनी से कर सकता था। किन्तु फिर भी उत्साही एवं कार्य-शील होने के कारण पच्चीस वर्ष की उम्र में वह फ्लोरेन्स के राज-नीतिक संघर्ष में खिंच आया।

मेकियावली के समय में इटली की राजनीतिक परिस्थिति बड़ी विचित्र एवं शोचनीय थी। इटली में उस समय सात मुख्य राज्य थे—सेवाय, जिनोआ, मिलान, फ्लोरेन्स, वेनिस, पोप की रियासत और नेपल्स। ये तो थे प्रधान राज्य किन्तु इनमें ऐसे नगर थे जो या तो अर्द्ध-स्वतंत्र या ऐसे उद्धत थे कि जिनके कारण राज्य में एक प्रकार की खींचातानी अथवा अशान्ति बनी रहती थी। इसके सिवा राज्य में दलबन्दियाँ भी थीं, जो राज्य में हलचल और उथल-पुथल मचाये रखती थीं।

आन्तरिक समस्याओं के सिवा उपर्युक्त राज्यों में, आपस में, अनियमित और निरन्तर संघर्ष होता रहता था। प्रत्येक राज्य की

अपनी नीति और अपना ध्येय था। प्रत्येक राज्य छल-बल से दूसरे को अपने आधिपत्य में लाने की चेष्टा में लगा हुआ था। पारस्परिक वैमनस्य और ईर्ष्या-द्वेष के कारण उनमें बड़ी तनातनी रहती थी। इसका परिणाम यह हुआ कि इटली की कोई सामूहिक नीति न हो सकी। उसके सारे अङ्ग शिथिल हो गये और एकता की सम्भावना दुस्तर हो गई।

पूर्वी प्रदेशों के व्यापार से इटली के नगर समृद्धिशाली और धनी हो गये थे। किन्तु इस धन से इटली को लाभ होने के बदले हानि हुई। आपस की कलह बढ़ाने में इसने अग्नि में घी का काम किया। धन के आधिक्य से लोगों में ऐश-आराम का व्यसन भी बढ़ गया, जिससे ऊपरी बनावट के साथ आचरण की दुर्बलता की वृद्धि हो गई।

उपर्युक्त परिस्थिति से लाभ उठाने एवं इटली के धन को लूटने की कामना आस-पास के राज्यों में बढ़ती चली गयी। 'पवित्र रोम-साम्राज्य' (Holy Roman Empire) के जर्मन सम्राट् तो पहले से ही हस्तक्षेप करते चले आते थे। अब फ़्रांस और स्पेन के राजे भी इटली में धँसकर उथल-पुथल मचाने लगे। फ़्रांस, पुर्तगाल और स्पेन इटली से उसका पूर्वी व्यापार तो छीन ही रहे थे, अब उसके धन को लूटने और उस पर अपना सिक्का और आधिपत्य जमाने के अनेक प्रयत्न करने लगे। इटली के राज्यों को इन विदेशियों की सहायता लेकर अपने देश के अन्य राज्यों के दलन करने में तनिक संकोच न होता। कोई फ़्रांस को बुलाता तो कोई

स्पेन से सहायता लेता। चूँकि फ्रांस और स्पेन में लाग-डाट रहती थी, अतएव जब एक बढ़ता तब दूसरा भी, बुलाये या बिना बुलाये, आ धमकता था। सारांश यह कि इटली एक ऐसा अखाड़ा हो गया, जिसमें इटली के ही नहीं, किन्तु विदेशी राजे भी आकर अपने बल और भाग्य की निरन्तर परीक्षा लेते थे। परिणाम यह हुआ कि इटली की दशा दिनोंदिन गिरती चली गयी। उसकी मान-मर्यादा, आर्थिक एवं राजनीतिक परिस्थिति बहुत बिगड़ गयी। यद्यपि रोमन केथोलिक-संसार के प्रधान की हैसियत से पोप का सर्वत्र सम्मान था, तथापि पोपों ने भी प्रायः स्वार्थपरायण नीति का ही अनुकरण किया। उनकी नीति भी अपनी रियासत के हानि-लाभ की अनुगामिनी थी। इटली को उससे लाभ पहुँचने के बदले हानि की अधिक संभावना थी।

सभ्यता और कला-प्रेम की दृष्टि से इटली के सब नगर-राज्यों में फ़्लोरेन्स का स्थान सबसे ऊँचा था। किन्तु उन गुणों के साथ ही वहाँ के जीवन में विलासिता की मात्रा भी बढ़ी-चढ़ी थी। फ़्लोरेन्स-निवासियों के आचरणों में पतन के लक्षण स्पष्ट दिखाई देते थे। वहाँ का शासन जनसत्तात्मक (Republican) था, किन्तु वह बाहरी ढोंग था; क्योंकि वास्तविक शक्ति 'मेडिची' ख़ान्दान में थी। मेडिची लोग मध्य योरप के प्रसिद्ध साहूकार और महाजन थे। अपने धन के बल से वे जिसे चाहते, ऊँचे पद पर पहुँचाते अथवा नीचे गिराते थे। उनके पिट्ठू हर जगह घुसे रहते थे। मेले-तमाशे दिखा-दिखाकर, बड़े-बड़े जलसे करके, दान और चन्दे देकर

एवं साहित्य और कला का पोषण करके उन्होंने जनता पर भी अपना जादू फैला और रोब गाँठ रखा था। उन्होंने फ़्लोरेन्स की उन्नति में बहुत बड़ा भाग लिया, किन्तु उन्होंने उन बातों पर ध्यान न दिया जिनके बिना राज्य सुखी और शक्तिशाली नहीं होते और न स्वतंत्रता की रक्षा एवं अन्य महान् कार्यों के करने में समर्थ होते हैं। फ़्लोरेन्स खोखला और दुर्बल हो गया था।

उपर्युक्त परिस्थिति से खिन्न और क्रुद्ध होकर सेवोनरोला नाम के एक साधुप्रकृति सुधारक ने खुले शब्दों में फ़्लोरेन्स की ऊपरी सभ्यता की निन्दा करते हुए आचरणों और नीति के सुधार के लिए घोर आन्दोलन किया। उसके व्याख्यानों से लोगों में ऐसा जोश पैदा हुआ कि जिससे फ़्लोरेन्स में क्रान्ति-सी हो गयी। शासन का रंग-ढंग बदलने लगा, नये-नये क़ानून बनाये जाने लगे और सुधार की अनेक योजनाएँ होने लगीं। किन्तु मेडिची खान्दान का प्रभाव ऐसा गहरा था कि उसको हटाना कठिन था। सुधारक नेता ने फ़्रांस के राजा चार्ल्स अष्टम की सहायता लेकर मेडिची खान्दान को राज्य से निकलवा दिया। सेवोनरोला की नीति से कुछ लोग तो असन्तुष्ट थे ही, उसके विरुद्ध झूठी-सच्ची बातें लगाकर—अनेक दोषारोपण करके और पोप की सहायता लेकर—शत्रुओं ने उसके मुख्य अनुयायियों को प्राणदण्ड दिलाकर ही दम लिया।

किन्तु सेवोनरोला को मारकर और उसके आन्दोलन का दमन करके फ़्लोरेन्स की समस्याएँ हल न हुईं। उसकी आन्तरिक दशा में सुधार न हो सका। उसकी नीति अस्थिर रही। वह फ़्रांस के

बल पर और भाड़े की विदेशियों की सेना के बल पर जीना चाहता था। उसके व्यक्तियों में ईर्ष्या-द्वेष की आग जलती थी। उसकी राजनीतिक दलबन्दियाँ उसे निर्बल करती रहीं। उसके धनिक स्वार्थपरायणता से अन्धे थे। वह प्रबल शत्रुओं से आक्रान्त था। फ्लोरेन्स का भविष्य बिगड़ता ही गया।

मेकियावली का राजनीतिक जीवन उपर्युक्त परिस्थिति में आरम्भ हुआ और फ्लोरेन्स के अन्तिम दिनों तक वह उनमें उलझता-सुलझता रहा। वह फ्लोरेन्स का उप-चान्सलर और सेक्रेटरी लगभग चौदह वर्ष तक रहा। दूत की हैसियत से इटली के राज्यों, फ्रांस के राजा, एवं सम्राट् मेक्सिमिलियन के साथ उसका व्यवहार रहा। सन् १५०२ में वह रोमाग्ना के सीज़र बोर्जिया के पास भेजा गया। वहाँ उसने उसकी धूर्तता के हथकंडों को ख़ूब देखा भाला। अपने ध्येय की सिद्धि के लिए सीज़र घृणित एवं जघन्य कार्यों के करने में तनिक भी संकोच न करता था। वस्तुतः वह विष से भरे हुए कनक-घट के समान था। उसकी नीति का प्रभाव मेकियावली पर बहुत गहरा पड़ा। सन् १५०६ में उसने जातीय सेना का संगठन भी किया। किन्तु कुछ काम न आया। पोप, स्पेन के फ़र्डिनेन्ड और नेपल्सवालों ने मिलकर पवित्र लीग बनाई, जिसका मुख्य ध्येय फ़्रांस को उत्तरी इटली से निकाल देना था। लीग का ध्येय सन् १५१२ में पूरा हो गया। रेवेना के युद्ध में फ़्रांस की हार हुई और फ्लोरेन्स में फिर मेडिची ख़ान्दान आ जमा। फ्लोरेन्स की प्रजा-सत्ता का अन्त हो गया। उसका

नाम बदलकर ग्रांड डची आव टस्कनी रखा गया। फ्लोरेन्स के पतन के साथ ही मेकियावली निर्वासित कर दिया गया।

सन् १५१३ में उसका नाम एक षड्यंत्र के सम्बन्ध में निकला। वह पकड़ा गया और उसे शारीरिक यातनाएँ दी गईं। कुछ समय तक क़ैदखाना भी झेलना पड़ा। छूटने पर वह गाँव में जाकर रहने लगा। किन्तु उसकी आर्थिक दशा इतनी खराब हो गयी कि जीवन-निर्वाह कठिन हो गया। यद्यपि दो-चार बार उसको कुछ काम भी सुपुर्द हुआ, किन्तु उससे उसे कोई स्थायी लाभ न हुआ। उसकी राजनीतिक योग्यता एवं युद्ध-विद्या का कुछ आदर किया गया। पोप लिओ दशम ने उससे फ्लोरेन्स के नैतिक सुधार के सम्बन्ध में सम्मति ली (१५१९-२०)। पोप क्लेमेन्ट सप्तम ने उसे फ्लोरेन्स के क़िलों की जाँच के लिए नियुक्त किया (१५२६)। संभव था, उसे कुछ करने का अवसर मिलता किन्तु अट्ठावन वर्ष की अवस्था में उसकी मृत्यु हो गई (२० जून १५२७)।

मेकियावली की समझ अच्छी थी; उसमें स्वाभाविक स्फूर्ति थी। यद्यपि उसने लैटिन और इटैलियन का अध्ययन किया था, किन्तु वह कोई बड़ा पण्डित या धुरन्धर विद्वान् न था। उसको अपने वैयक्तिक जीवन या राजनीतिक क्षेत्र में कोई सफलता न मिली। उसका जीवन साधारण आदमियों का सा था। उसके मित्रों और मिलनेवालों में भले-बुरे सभी प्रकार के आदमी थे। उसकी बातचीत में भी फूहड़पन और उच्चाशय का

मिश्रण था। सारांश यह कि उसमें कोई आकर्षण अथवा विशेषता न थी। वैसे आदमी जीते-मरते रहते ही हैं। उसकी कीर्ति का मुख्य कारण उसकी कुछ रचनाएँ हैं जिनमें 'प्रिन्स' और 'फ़्लोरेन्स का इतिहास' मुख्य मानी जाती हैं। उन दोनों कृतियों में आन्तरिक सम्बन्ध है; क्योंकि फ़्लोरेन्स के इतिहास ने ही उसे इटली की शोचनीय दशा की अनुभूति करायी थी और 'प्रिन्स' के रचने की प्रेरणा की थी। उसके पढ़ने से 'प्रिन्स' को सहानुभूति-पूर्वक समझने में सहायता मिलती है। फिर भी वह इतने महत्त्व का नहीं जितना कि 'प्रिन्स' है।

'प्रिन्स' की विशेषता यह है कि उसके विचार मेकियावली के समय की विचार-धारा से विभिन्न हैं। उसके समय में राजनीतिक विचारों का क्षेत्र संकीर्ण और अर्गलाबद्ध था। राजनीतिक विचार रोमन चर्च और पवित्र रोमन साम्राज्य तथा सम्राट् की धुरियों पर चला करते थे। उन दो संस्थाओं को अवश्यम्भावी मानकर आगे विचार किया जाता था। लोगों की यह धारणा हो गई थी कि राज्य अथवा शासन का मुख्य ध्येय धर्म की रक्षा, धर्म का संस्थापन और आचार-विचारों की धार्मिक मर्यादाओं का पालन है। शासन और शासक का कर्तव्य यह समझा जाता था कि वे धार्मिक आदर्शों का स्वयं पालन करें और उनके प्रचार के लिए राज्य की शक्ति को काम में लायें। मेकियावली ने इन सब बातों को या तो गौण स्थान दिया या उनको अनर्गल कहकर त्याग दिया। उसके विचारों के अनुसार "जो व्यक्ति वास्तविक स्थिति का ध्यान

छोड़कर आदर्श बातों की ओर जाता है वह स्वयं अपना सर्वनाश कर लेता है" (पृ० ८३) इसलिए "मैं काल्पनिक बातों को छोड़कर सत्य और व्यावहारिक ज्ञान बतलाना चाहता हूँ जिससे समझदार लोगों को उनसे लाभ हो" (पृ० ८३)। "संसार में केवल साधारण लोगों ही को बसा हुआ समझना चाहिए।" अतएव मनुष्य में केवल अथवा सदा दैवी गुण की कल्पना या धारणा कपोल-कल्पना और व्यर्थ है।

ध्यान रखने योग्य दूसरी बात यह है कि मेकियावली ने 'शासक' में राजनीति-विज्ञान के सांगोपांग निरूपण की चेष्टा नहीं की है। उसने यह पहले ही मान लिया कि शासन और शासक का होना अनिवार्य है। उसकी यह धारणा थी कि "मनुष्यों की रुचि बुराई की ओर अधिक है। वे भलाई की ओर स्वभाव से नहीं वरन् मजबूरी से झुकते हैं। जनता अपने आप सुधार करने की चेष्टा नहीं करती। सच तो यह है कि अगर उसे चुनने की अबाधित स्वतन्त्रता दे दी जाय तो वह दुष्टता की ओर झुकती है जिससे सब व्यवस्था बिगड़ जाती है। उसको व्यवस्थित मार्ग पर लाने के लिए उसमें जोश पैदा कर देने से ही काम नहीं चलता। उसका जोश प्रायः क्षणिक होता है, इसलिए यह आवश्यक है कि जब वह किसी बात को मानने में आनाकानी करे तो उससे जबर्दस्ती मनवाया जाय।" इन सब कामों के लिए शासन, शासक और व्यवस्था की आवश्यकता स्वयंसिद्ध है। अतएव उन पर बहस न करके उसने इस बात पर विचार किया है कि राज्यों के स्थिर

रखने और अपना कार्य संपादन करने के लिए किन साधनों की आवश्यकता है। उसने सब प्रकार के शासनों के निरूपण करने और उनके क़ायम रहने के विधानों की छानबीन नहीं की। 'प्रिन्स' में उसने एकसत्तात्मक राज्य पर ही विचार किया है।

राज्य क़ायम रखने के मुख्य साधन चार हैं। एक तो चतुर और युद्ध-विद्या-विशारद राजा, दूसरा व्यवस्थित युद्धशालिनी जातीय सेना, तीसरा धन और चौथा सन्तुष्ट प्रजा। भाड़े की सेना और रिक्त राजकोष दोनों ख़राब हैं। ऐसा ही उसका अनुभव भी था। किन्तु सैनिक एवं आर्थिक दशा को अच्छी या बुरी रखना राजा या शासक की योग्यता अथवा अयोग्यता पर अवलम्बित है। अतएव राज्य का प्राण राजा या शासक ही है। सब दारोमदार उसी पर है।

राजा में और गुण चाहे हों या न हों, किन्तु कुछ गुण तो अनिवार्य रूप से होने आवश्यक हैं। "जो लोग शासन करते हैं उनके अध्ययन करने के लिए केवल एक कला है—और वह है युद्ध-विद्या।......अतएव राजा को युद्ध-विद्या के सिवाय और किसी दूसरे विषय का न तो अध्ययन करना चाहिए और न किसी का ध्यान करना चाहिए" (पृ० ७९) "इसके सिवाय वह बराबर शिकार करता रहे।" (पृ० ८०) "राजा को इतिहास पढ़ना और बड़े आदमियों के कामों का अध्ययन करना चाहिए।" (पृ० ८१) "वह यह जाने कि किस समय अच्छाई करना उचित और किस समय अनुचित है।" (पृ० ८३)। जो उदारता

अधिक ख़र्च कराती अथवा लोगों से डर छुड़ाती है वह निन्दनीय और हानिकारक है। उससे तो सूम रहना ही अच्छा है। यही वात दया के भी सम्बन्ध में है। "राजा को चाहिए कि यदि उसके कामों से प्रजा में एका होता हो और उन्हें सुख मिलता हो तो उसे निर्दयता की बदनामी से न डरना चाहिए।" (पृ० ९०) चूँकि प्रेम और भय दोनों का एक साथ होना कठिन है "इसलिए बेहतर यही है उससे लोग डरें।" मौक़ा पड़ने पर क्रूरता और निर्दयता करने में शासक को ज़रा भी संकोच न होना चाहिए।

बहु-प्रचलित एक धारणा यह है कि शासक को अपने वचन का पालन करना चाहिए। मेकियावली इसे ठीक नहीं मानता। उसकी सम्मति में "जब बुद्धिमान् राजा यह देखे कि वचन-पालन करने से अपनी हानि होती है और जिन कारणों से वह वचनबद्ध हुआ था वे नहीं रह गये तो उसे अपने वचन के विरुद्ध काम करने में आनाकानी न करनी चाहिए" (पृ० ९६)। शासकों के प्रति मेकियावली का यह उपदेश है कि "अपने को धर्मात्मा, सच्चा, दयालु, धर्मभीरु, विश्वासी प्रकट करो और चाहे ये गुण बरतो भी किन्तु··· जब कभी आवश्यकता आ पड़े तब तत्काल उसके विपरीत काम करने को तैयार रहो।" (पृ० ९७-९८) उसका दिमाग़ ऐसा होना चाहिए कि हवा के रुख़ के साथ वह अपने को बदल सके" (पृ० ९८)। "यथासंभव उसे सद्गुण न छोड़ना चाहिए, किन्तु यदि आवश्यकता आ पड़े तो बुराई के लिए सदा तैयार रहना चाहिए।" (पृ० ९८) उसमें वस्तुतः गुण होने की इतनी आवश्यकता नहीं

जितनी कि इस बात की है कि लोग समझें कि वह गुणी और धर्मात्मा है। ऊपरी आडम्बर का रखना भीतरी गुणों से भी अधिक उपयोगी और आवश्यक है।

प्रायः यह कहा जाता है कि प्रत्येक काम में आदमी को सावधान रहना चाहिए, ख़ूब समझ-बूझकर, सोच-विचारकर और आगा-पीछा देखकर बढ़ना चाहिए। मेकियावली को इस प्रकार के आचरणों की उपयोगिता और सत्यता में भी सन्देह है। वह लिखता है कि "मेरा यह विश्वास है कि सावधानी की अपेक्षा उत्तेजना में आकर काम करने से अधिक लाभ होता है, क्योंकि भाग्य एक स्त्री के समान है जो जबर्दस्ती करने ही से तुम्हारे क़ब्ज़े में आ सकती है।" (पृ० १४१)

उपर्युक्त उदाहरणों से यह तो स्पष्ट है कि मेकियावली की विचारधारा कुछ निराली सी थी अर्थात् उस समय के राजनीतिक अथवा सामाजिक दृष्टिकोणों से भिन्न थी। यही उसकी मौलिकता और विचार-स्वतंत्रता का प्रमाण है। किन्तु यह स्मरण रखना चाहिए कि उसने जो मार्ग अवलम्बन किया, उसका प्रमुख प्रदर्शक यूनान का तत्त्ववेत्ता अरस्तू था। मेकियावली ने न तो आदर्श राज्य और न विविध शासन-विधानों के निरूपण की चेष्टा की। उसने शास्त्र-रचना का प्रयत्न नहीं किया। उसका आशय दार्शनिक न था। उसकी प्रेरणा का मुख्य कारण इटली की विशृंखल और शोचनीय दशा थी जिससे उसके मर्म को आघात पहुँचा था। उसके अनुभव ने उसे बता दिया था कि यद्यपि जन-सत्तात्मक राज्य

में कुछ गुण अवश्य हैं और एक-सत्तात्मक में कुछ दोष भी हैं, तथापि तत्कालीन परिस्थिति को देखते हुए उन दोनों में एक-सत्तात्मक शासन ही इटली के लिए हितकर होगा। वह ऐसे सुधारक और दृढ़ नेता की खोज में था जो उसकी मनोकामना पूर्ण कर सके, "क्योंकि इटली को स्वतंत्र करने के लिए इस मौक़े को हाथ से न जाने देना चाहिए। इटली के इस स्वतंत्रकर्ता से विदेशियों से पीड़ित प्रान्तों के निवासी जो प्रगाढ़ प्रेम करेंगे, उनका मैं वर्णन नहीं कर सकता।"

दूसरी बात जो स्पष्ट होती है वह यह है कि राजनीतिक और शासन को धर्म अथवा कर्तव्याकर्तव्य के बन्धनों से वह मुक्त मानता है। राजनीति में अच्छे और बुरे की कसौटी केवल उपयोगिता है। राजनीति विजय और सफलता देखती है। छल-बल, झूठ-सच, ईमानदारी या बेईमानी, हत्याकाण्ड आदि जिस किसी भी ढंग से वह मिल सके वही करना चाहिए। इन्ही बातों के कारण मेकियावली का नाम बदनाम हो गया। लोग कहते हैं कि वह सिद्धान्त-शून्य, धर्म-शून्य और आदर्श-शून्य निरा यथार्थवादी था। किन्तु यह धारणा उचित नहीं। उसके विचार से "राज्यों की बुनियाद अच्छे क़ानून और अच्छी सैनिक शक्ति पर निर्भर है।" (पृ० ६५) शासक को भोग-विलास में पड़ना न चाहिए। "उसे कम से कम यह तो अवश्य चाहिए कि वह उन अवगुणों से दूर रहे जिनके कारण राज्य जाने का खटका है।" (पृ० ८४) राजा को सबसे अधिक भय दो बातों से करना चाहिए। "एक तो प्रजा

की घृणा और दूसरे हिक़ारत।" (पृ० ८८) "प्रजा में राजा के प्रति घृणा तब उत्पन्न होती है जब वह उनकी जायदाद और स्त्रियों पर दाँत गड़ाता है।" (पृ० १००) राजा को तो "अपना चाल-चलन ऐसा रखना चाहिए जिससे उसके कामों से शान-शौकत, साहस, गम्भीरता और शक्ति झलका करे।" (पृ० १०१) "सुशासित राज्यों और विचारवान् राजाओं ने सदा इस बात का ध्यान रक्खा है कि एक तो अमीरों और सरदारों को इतना तंग न किया जाय कि वे जान पर खेलने को उतारू हो जायँ और दूसरे जनता को सन्तुष्ट और प्रसन्न रखने में कसर न की जाय।" (पृ० १०४) "राजा को यह भी चाहिए कि वह गुणियों का आदर करे और ललित कला से प्रेम रखे। इसके सिवाय उसे चाहिए कि वह अपनी प्रजा को शान्तिपूर्वक व्यापार, खेती या अन्य मनमाने काम करने को उत्तेजित करे।" उसे चाहिए कि "वह सबसे मिलता रहे और उदारता और दया-पूर्वक व्यवहार करे।" (१२६-२७)

यद्यपि "प्रिन्स" की रचना सन् १५१३ में हुई थी, तथापि उसका प्रकाशन मेकियावली के जीवन-काल में न हो सका। उसने जिस आशय से उसकी रचना की थी वह सफल न हो सका। इटली की राजनीतिक व्यवस्था पर उसका कोई विशेष प्रभाव न पड़ा। किन्तु यह तो अवश्य हुआ कि उसकी विचार-धारा और सिद्धान्तों ने योरप का दृष्टिकोण बहुत कुछ बदल दिया। इसी कारण वह आधुनिक राजनीति का विधाता माना जाता है। उसके सिद्धान्तों की व्यावहारिकता का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि आज दिन

शासक-वृन्द उनका ही प्राय: अनुसरण करता है। हेनरी अष्टम, रानी एलिज़बेथ, रिशेल्यू, कोलीनी, विलियम दि साइलेन्ट लुई, १४, फ़्रेडरिक दि ग्रेट और बिस्मार्क ही नहीं वरन् स्टेलिन, हिटलर, मुसोलिनी और अन्य शासक लोग उनका अनुकरण करते हैं। आधुनिक शासकों के लिए मेकियावली गुरु और उसका 'प्रिन्स' मूल मंत्र के समान है। जहाँ देखो, कमोवेश उसी की माया फैली दिखाई पड़ती है। यह सब इसी कारण है कि मानव-समाज की वास्तविक परिस्थिति, मनुष्य की स्वार्थ-वृत्ति और दुर्वलताओं को मानकर ही उसके विचार रचे गये हैं।

प्रयाग विश्वविद्यालय
२६-११-४०

रामप्रसाद त्रिपाठी

—

शासक

पहला अध्याय

भिन्न प्रकार की शासन-प्रणालियाँ और उनके स्थापित करने के तरीक़े

मनुष्य-जाति पर जो संस्थाएँ (राज्य) शासन कर रही हैं या शासन कर चुकी हैं उनकी शासन-प्रणाली या तो प्रजासत्तात्मक रही है या एकतन्त्रात्मक। एकतन्त्र शासन-प्रणाली में शासक या तो वंशपरम्परागत रूप से राज्य करते हैं और ये शासक एक ही वंश के होते हैं, अथवा उनका वंश हाल ही का स्थापित किया हुआ होता है। नये राजवंशों में कुछ तो बिल्कुल ही नये होते हैं, जैसे मिलन का राजा फ़्रांसिस स्फ़ोर्जा। किन्तु बाज़-बाज़ नये राजघराने प्राचीन राजवंशों के सम्बन्ध के कारण राज्य पा जाते हैं, जैसे स्पेन के राजा को नेपल्स का राज्य मिल गया। इस प्रकार जो नये राज्य स्थापित होते हैं उनमें या तो पहिले ही से कोई दूसरा राजघराना राज करता रहता है या वे पहले स्वतन्त्र होते हैं। इन स्वतन्त्र राज्यों को नया राजा अपनी या किसी दूसरे की ताक़त से जीत लेता है, या उसे वह राज्य अपने सौभाग्य से अथवा अपने विशेष गुणों के कारण मिल जाता है।

दूसरा अध्याय

वंशपरम्परागत राज्यों के विषय में

प्रजातन्त्रों के बारे में मैं यहाँ कुछ नहीं कहूँगा क्योंकि उनके विषय में मैंने दूसरी जगह बहुत कुछ कहा है। इस समय मैं केवल एकतन्त्र शासन का ज़िक्र करूँगा और यह बतलाऊँगा कि ऊपर गिनाये हुए नाना प्रकार के राज्यों पर किस प्रकार शासन किया जा सकता है और उन पर किस तरह हुकूमत क़ायम रखी जा सकती है। पहली बात तो यह है कि नवीन एकतन्त्र राज्यों की अपेक्षा पुराने राज्यों में शासन करना सहल है; क्योंकि यदि इन पुराने राज्यों में परम्परा से चले आनेवाले रीति-रिवाज क़ायम रखे जायँ, और यदि राजा अपने आपको उस राज्य की आकस्मिक बातों के अनुकूल बना ले, तो वहाँ शासन करने में कोई कठिनाई नहीं पड़ सकती। ऐसी जगहों में यदि कोई विशेष और भयंकर बात न पैदा हो जाय तो साधारण योग्यता का राजा भी मज़े से काम चला सकता है। और यदि किसी कारण उसका राज्य छिन भी जाय तो तनिक सी दुर्घटना होते ही वह राज्य नये शासक के हाथ से निकलकर फिर उसी पुराने राजा के हाथ में पहुँच जाता है।

इटली में इसके कई उदाहरण मिलते हैं। सन् '८४ में फ़रारा के ड्यूक पर वीनिसवालों ने चढ़ाई की, किन्तु प्राचीन शासक

होने ही के कारण ड्यूक अपने राज्य पर अधिकार जमाये रहा। सन्' १० में पोप जूलियस की भी इसी कारण रक्षा हुई। प्राचीन राजवंशों के राजाओं को प्रजा को सताने की कम आवश्यकता पड़ती है। अतएव प्रजा का उससे अधिक प्रेम करना स्वाभाविक ही है। और यदि उस (प्राचीन वंश के) राजा में कोई ऐसा बड़ा दुर्गुण न हुआ जिससे लोग उससे घृणा करने को बाध्य ही हो जायँ तो प्रजा को उससे एक प्रकार का स्नेह सा हो जाता है। प्राचीन होने के कारण लोगों को यह याद नहीं रह जाता कि जब उसके वंश का राज्य स्थापित हुआ था उस समय कितने फेर-बदल हुए थे। किन्तु जब किसी नये वंश का राज्य स्थापित होता है तो बहुत से उलट-फेर होते हैं और उलट-फेर होने का भय सदा ही रहता है।

तीसरा अध्याय

मिश्रित एकतन्त्र राज्यों के विषय में

किन्तु असली कठिनाइयाँ हाल ही के स्थापित नए एकतन्त्र राज्यों में उपस्थित होती हैं। लोग अपने पुराने मालिक के विरुद्ध इसी आशा से हथियार उठाते हैं कि नये मालिक के राज्यकाल में उन्हें आराम मिलेगा। किन्तु इस विषय में उन्हें निराश होना पड़ता है क्योंकि जब नये राजा का शासन आरम्भ होता है, तब उन्हें मालूम पड़ता है कि यह नया शासक पुराने शासक से भी ख़राब है। लोगों में यह धारणा उत्पन्न होते ही नये राजा को बड़ी कठिनाइयाँ होने लगती हैं। राजा भी इस मामले में लाचार हो जाता है और अपनी नई प्रजा का असंतोष दूर नहीं कर सकता क्योंकि नये राज्य जमाने में उसकी नई प्रजा को उससे और उसके सिपाहियों से कुछ न कुछ तकलीफ़ ज़रूर ही होती है।

अतएव जिन लोगों को तुम्हारे नये राज्य जमाने से हानि हुई है वे सब तुम्हारे दुश्मन हो जायँगे। इसके सिवाय जिन लोगों ने इस नये राज्य के स्थापित करने में तुम्हारी सहायता की है, उन्हें भी तुम संतुष्ट नहीं कर सकते क्योंकि उन्होंने तुमसे जितनी आशाएँ बाँधी होंगी उन सबको पूरा करना तुम्हारे लिए अति कठिन है। उनके अनुगृहीत होने के कारण तुम उनके विरुद्ध

कुछ कार्रवाई भी नहीं कर सकते। उनकी सहायता के बिना बड़ी से बड़ी सेना के होते हुए भी किसी नये प्रान्त में राज्य जमाना संभव नहीं है। इसका उदाहरण फ़्रांस के राजा लुई बारहवें के इतिहास में मिलता है। उसने मिलन पर बड़ी आसानी से अधिकार कर लिया, किन्तु तुरन्त ही वह स्थान उसके हाथ से जाता रहा। लुडोविको ने बिना किसी बाहरी सहायता के अकेले ही उसे पहली बार लुई से छीन लिया। इसका कारण यह था कि नगर-निवासियों ने पहली बार लुई के शासन में आराम पाने की आशा से लुई की सहायता की थी और उसके स्वागत में नगर के फाटक खोल दिये थे। किन्तु जब लुई के शासन से उनकी आशाएँ पूरी नहीं हुईं तब वे लुई के विरुद्ध हो गये।

हाँ, यह सच है कि जिन स्थानों में बग़ावत हो जाती है उन स्थानों को फिर से जीत लेने पर उनका हाथ से निकलना सहज नहीं होता, क्योंकि बग़ावत हो जाने के कारण शासक चौकन्ना हो जाता है, और उपद्रवियों को दण्ड देने में कुछ भी आगा-पीछा नहीं सोचता और अपनी कमज़ोरियों को फ़ौरन दूर कर डालता है। अतएव पहली बार फ़्रांस से मिलन छीन लेने के लिए ड्यूक लुडोविको ऐसे (साधारण) आदमी का खड़ा हो जाना ही काफ़ी था। किन्तु जब फ़्रांस ने इस विद्रोह को दबाकर मिलन पर फिर से अधिकार किया, तब उसे वहाँ से दुबारा निकालने के लिए सारे संसार को उसके विरुद्ध हो जाना पड़ा और फिर भी वह तब निकाला जा सका जब कई बार उसके शत्रुओं की करारी हार हो

चुकी थी। फ़्रांस को दुबारा मिलन से निकालने में इतनी कठिनता जिन कारणों से हुई उनका वर्णन ऊपर किया जा चुका है। तो भी, इन कठिनाइयों के होते हुए भी, दोनों वार मिलन उससे छीन लिया गया। फ़्रांस के अधिकार से पहली वार मिलन के निकल जाने के कारणों का हाल कहा जा चुका है। अब हमें यह देखना है कि दूसरी वार 'मिलन' छिन जाने के क्या कारण थे और उन कारणों को फ़्रांस कैसे दूर कर सकता था, दूसरा शासक ऐसी अवस्था में कौन-कौन से ऐसे उपाय करता जो फ़्रांस के राजा ने नहीं किये? इस विषय में यह वात याद रखनी चाहिए कि जब किसी राज्य में नया राज्य जीतकर मिलाया जाता है तो उस विजित राज्य के निवासियों की जाति और भाषा या तो जीते हुए राज्य के लोगों से मिलती-जुलती हुई या उससे भिन्न होती है। यदि दोनों की जातीयता और भाषा एक ही हुई (और यदि विजित राज्य स्वतन्त्रता का आदी नहीं रहा है) तो उस नये राज्य पर क़ब्ज़ा जमाये रखना कुछ कठिन नहीं है। उसपर पूरा पूरा अधिकार करने के लिए वहाँ के पुराने राजवंश को विल्कुल नष्ट कर डालने ही से काम चल जायगा। इसके वाद यदि विजित लोगों की पुरानी वातों में हस्तक्षेप न किया जाय तो दोनों लोगों के रहन-सहन में भेद न होने के कारण, दोनों ही लोग नये शासक के अधीन मिल-जुलकर शान्तिपूर्वक रहने लगते हैं। इसका उदाहरण फ़्रांस में मिलता है। वर्गण्डी, ब्रिटनी, गैस्कनी और नार्मण्डी पहले भिन्न-भिन्न राज्य थे और उनमें भिन्न भिन्न राजे राज करते थे। किन्तु

जब फ़्रांस के राजा ने उन्हें जीत लिया तो जातीयता और भाषा एक होने के कारण अब वे उसमें मिलकर बिल्कुल एक हो गये हैं। यदि ऐसी अवस्था में भाषा का थोड़ा-बहुत भेद हुआ भी तो रहन-सहन और रीति-रिवाज एक होने के कारण ये दोनों (जेता और विजित) भली भाँति मिलकर रह सकते हैं। जो कोई भी उनपर शासन करना चाहे उसे चाहिए कि वह वहाँ के पुराने शासकों का वंश बिल्कुल नष्ट कर दे और वहाँ के क़ानूनों और टैक्सों में कुछ फेर-बदल न करे। यदि इन उपायों का अवलम्बन किया जाय तो विजित राज्य शीघ्र ही पुराने राज्य में मिल जायगा और दोनों एक हो जायँगे। किन्तु यदि विजित राज्य की भाषा, क़ानून और रीति-रिवाज राजा के पुराने राज्य से भिन्न हुए तो उस पर क़ब्ज़ा बनाये रखने में बड़ी कठिनाई होती है, और उस पर अधिकार क़ायम रखने के लिए बड़े सौभाग्य और परिश्रम की जरूरत पड़ती है। इसके लिए सबसे अच्छा उपाय यह है कि नया राजा उसी विजित देश में जाकर रहने लगे। इस उपाय का अवलम्बन करने से वहाँ का राज्य स्थायी और निश्चित हो जायगा। तुर्कों ने ग्रीस में यही किया है, और यदि वे (तुर्क) वहाँ (ग्रीस में) जाकर न रहते तो उनका राज वहाँ रहना भी असंभव था। उसी स्थान पर डटे रहने से वहाँ जो जो उपद्रव आरम्भ होते हैं उन सब पर नज़र बनी रहती है और शीघ्र उनका दमन किया जा सकता है। किन्तु यदि शासक दूर रहे तो उन्हें उन बातों का समाचार उस समय मिलता है जब उनका दमन करना

असम्भव हो जाता है। इसके सिवा उस स्थान में तुम्हारे कर्मचारी (तुम्हारी मौजूदगी के कारण) अत्याचार नहीं कर सकते, और प्रजा को राजा तक पहुँचने में कोई कठिनाई नहीं होती। इससे वह प्रसन्न रहती है। यदि वह राजभक्त रहना चाहे तो राजा के निकट रहने के कारण उससे उसका स्नेह हो जाता है, और यदि वह उसके विरुद्ध जाना चाहे तो राजा के वहीं बने रहने के कारण उसे (प्रजा को) हमेशा डर बना रहता है।

यदि कोई बाहरी राजा उस राज्य पर आक्रमण करना भी चाहे तो इस काम के लिए उसकी एकाएक हिम्मत नहीं पड़ेगी। अतएव जब तक वह राजा वहाँ रहेगा तब तक उसका निकालना भी कठिन हो जायगा। विजित स्थान में अपना राज्य क़ायम रखने का दूसरा और अधिक उत्तम उपाय यह है कि विजित राज्य के महत्त्वपूर्ण स्थानों पर अपने उपनिवेश स्थापित करके वहाँ एक प्रकार की नाकेबन्दी कर दे क्योंकि यदि यह उपाय न किया जायगा तो वहाँ एक बड़ी सेना रखने की ज़रूरत पड़ेगी। उपनिवेश स्थापित करने में राजा का कुछ भी खर्च न होगा और प्रायः नाम मात्र के खर्च में वे आदमी वहाँ भेजे जा सकते हैं। इस कार्रवाई से केवल वे लोग असन्तुष्ट और नाराज़ होंगे जिनके मकान और ज़मीन छीन कर इन नये आये हुए लोगों को दिये जायँगे। किन्तु इन लोगों की संख्या कम होगी, ये ग़रीब होकर इधर-उधर चले जायँगे और दूर दूर फैल जाने के कारण मिलकर वे राजा को हानि नहीं पहुँचा सकेंगे। इनके सिवा बचे हुए लोगों को कोई शिकायत नहीं

होती और इस कारण वे शीघ्र ही प्रसन्न हो जाते हैं। उन्हें यह भी डर बना रहता है कि यदि हमने ज़रा भी गड़बड़ी की तो हमारा भी वही हाल होगा और हमसे मकान, ज़मीन आदि छीन लिये जायँगे। सारांश यह कि इन उपनिवेशों को स्थापित करने में कुछ भी ख़र्च नहीं पड़ता, इनसे उस जगह के बहुत कम आदमियों को असंतोष होता है और वे लोग जो बसाये जाते हैं, शासक के प्रति सदा राजभक्त बने रहते हैं, और जिन लोगों के मकान आदि छिन गये हैं वे ग़रीब होने और तितर-बितर हो जाने के कारण राजा का कुछ बिगाड़ नहीं सकते। इस विषय में यह याद रहे कि राजा को चाहिए कि वह या तो लोगों की ख़ुशामद करके उन्हें संतुष्ट कर ले और या उन्हें बिल्कुल ही नष्ट कर डाले। लोगों को यदि ज़रा सा नुक़सान पहुँचाया जाय तो वे बदला लेने को तैयार हो जाते हैं और जब कभी बदला ले भी लेते हैं। किंतु यदि उन्हें भरपूर नुक़सान पहुँचा दिया जाय या उनका सर्वनाश कर दिया जाय तो उनकी कमर टूट जाती है और वे बदला लेने के लायक़ ही नहीं रह जाते। अतएव यदि हम किसी को नुक़सान पहुँचाने पर उतारू हो जायँ तो हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि उसे इतना निर्बल कर दें कि उसमें फिर बदला लेने की हिम्मत और ताक़त न बच रहे। किन्तु यदि नये विजित देश में उपनिवेश बनाने के बदले सेना रखी जाय तो उससे हानि होगी, क्योंकि उसमें इतना ख़र्च पड़ेगा कि नये विजित राज्य की सारी आमदनी उसी में खप जायगी। यही नहीं, इससे सारी प्रजा में असन्तोष फैल

जायगा क्योंकि अपने यहाँ विदेशी सेना का रहना सबको अखरता है। इसका परिणाम यह होगा कि वे लोग दुश्मन हो जायँगे—और ये दुश्मन राजा को हानि भी पहुँचा सकते हैं क्योंकि दुश्मन होने और हार जाने पर भी वे सुखपूर्वक अपने घरों में मौजूद हैं। अतएव विजित देश में सेना का रखना उतना ही हानिकारक है जितना उपनिवेश का स्थापित करना लाभदायक है। इसके सिवा इस प्रकार के विदेशी राज्य में शासन करनेवाले राजा को चाहिए कि वह अड़ोस-पड़ोस के कमज़ोर राजाओं का नेता और संरक्षक बन जाय और ताक़तवर पड़ोसियों को कमज़ोर करने की कोशिश करता रहे। उसे इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि उसके राज्य में उससे अधिक ताक़तवर कोई विदेशी शक्ति न घुसने पावे, क्योंकि यदि वह राज्य में घुस आवेगी तो ऐसी शक्ति डर या लोभ के कारण राज्य के झगड़ों में हस्तक्षेप करने लगेगी और असन्तुष्ट लोग उससे बीच-बिचाव करने के लिए प्रार्थना किया करेंगे। इसका उदाहरण ग्रीस में मिलता है। वहाँ ईटोली ने रोमन लोगों को बुलाया था, और जिन जिन प्रान्तों में वे घुसे थे, उन उन प्रान्तों में उन्हें वहाँ के निवासियों ने निमंत्रित किया था। इस विषय में यह बात मार्के की है कि जब कोई बलवान् विदेशी शक्ति पराधीन राज्य में घुस आती है तब वहाँ के कमज़ोर लोग उससे मिल जाते हैं क्योंकि वे शासक से ईर्ष्या करते हैं। उनकी इस ईर्ष्या के कारण नवीन शक्ति इन्हें अपनी ओर सरलता से फोड़ लेती है। वे अपने आप

उससे आकर मिल जाते हैं। यदि आक्रमणकारी शक्ति इस बात का ध्यान रखे कि ये छोटे छोटे लोग कहीं अधिक ताक़तवर न हो जायँ तो अपनी फ़ौज और उनकी सहायता से वह उस प्रान्त की हर्ता-कर्ता हो सकती है। जो राजे नये प्रान्त जीतकर इन नियमों के अनुसार अच्छी तरह शासन नहीं करते, वे शीघ्र ही अपने नये राज्य को खो बैठते हैं और जब तक वह उनके अधिकार में रहता है तब तक उन्हें सैकड़ों कठिनाइयाँ झेलनी पड़ती हैं।

जब रोमन लोग कोई नया प्रान्त जीतते थे तो उनमें वे यही नीति बरतते थे। वे वहाँ अपने उपनिवेश स्थापित करते, कमज़ोर ज़मींदारों और राजों की ख़ुशामद करते लेकिन साथ में यह भी ध्यान रखते थे कि उनकी शक्ति न बढ़ने पावे। वहाँ जो बलवान् राजे होते उन्हें वे दबा देते और विदेशी शक्ति को उस प्रान्त में अपना प्रभाव जमाने का मौक़ा ही न मिलने देते थे। इस विषय में केवल ग्रीस के प्रान्त का उदाहरण देना ही काफ़ी है। वहाँ उन्होंने एकिआई और ईटोली से मित्रता कर ली, मेसिडोनिया को (जो शक्तिशाली राज्य था) दबा दिया, और एण्टियोकस को देश से निकाल दिया। एकिआई और ईटोली से मित्रता होने पर भी उन्होंने उन्हें अपने राज्य नहीं बढ़ाने दिये, और न उन्होंने फ़िलिप को नीचा दिखाये बिना उससे मित्रता ही की, तथा एण्टियोकस में योग्यता होने पर भी उन्होंने उसे किसी राज्य का मालिक नहीं होने दिया।

रोमन लोगों की ये कार्रवाइयाँ बहुत उचित और बुद्धिमत्ता की थीं। क्योंकि बुद्धिमान् व्यक्ति को केवल मौजूदा ख़तरों का ही उपाय न करना चाहिए किन्तु उसे आगे के ख़तरों की रोक करना भी उचित है। यदि पहले से उपाय किया जाय तो ख़तरे का मौक़ा आने पर आदमी उसका सामना करने को तैयार रहता है, किन्तु यदि वह यह सोचा करे कि जब मौक़ा आवेगा तब देखा जायगा तो रोग की औषधि समय पर मौजूद न रहने से रोग असाध्य हो जाता है। इनकी हालत भी उन ज्वरों की तरह है जो आरम्भ में यदि पहिचान लिये जायँ तो बड़ी सरलता से अच्छे हो सकते हैं, किन्तु उनका पहिचानना ही कठिन है। उनका निदान न होने के कारण उनकी चिकित्सा भी नहीं होती और वे बढ़ जाते हैं, और बढ़ जाने पर उनका पहिचानना तो सहल हो जाता है किन्तु उनका अच्छा करना कठिन हो जाता है। राज्य-सम्बन्धी मामलों की भी यही हालत है। यदि झगड़ों की सम्भावना पहिले ही से समझ ली जाय तो उनका परिहार करना भी सरल हो जाता है। किन्तु यह दूरदर्शिता केवल बुद्धिमान् लोगों ही में होती है। यदि दूरदर्शिता न होने के कारण वे झगड़े इतने बढ़ जायँ कि सब लोग उन्हें समझने लगें तो फिर उनको रोकना बड़ा कठिन हो जाता है। जो कुछ भी हो, रोमन लोग इन उपद्रवों को अपनी दूरदर्शिता के कारण पहिले ही से जानकर उनका उपाय तलाश कर लेते थे। उन ख़तरों की पहिले से रोक करने में दूसरों से लड़ाइयाँ मोल लेनी पड़ती थीं, किन्तु रोमन इन लड़ाइयों

के डर से ख़तरों को कभी बढ़ने नहीं देते थे; क्योंकि वे इस बात को भली भाँति जानते थे कि लड़ाई से छुटकारा नहीं मिल सकता, कभी न कभी लड़ाई अवश्य ही लड़नी पड़ेगी और यदि लड़ाई स्थगित कर दी जाय तो इससे अपना नुक़्सान और विपक्षियों का लाभ होगा। अतएव उन्होंने ग्रीस में फ़िलिप और एंटियोकस से इसलिए लड़ाई छेड़ दी कि जिससे वे आगे कभी उन पर इटली में धावा न कर दें। यदि वे चाहते तो उस समय लड़ाई बचा सकते थे, किन्तु उन्होंने लड़ना ही उचित समझा। आज-कल लोग कहा करते हैं कि हमें समय से लाभ उठाना चाहिए, किन्तु रोमन लोग समय की अपेक्षा अपने गुणों से लाभ उठाना अच्छा समझते थे क्योंकि यह भी सम्भव है कि आगे चलकर समय बजाय लाभ के हानि पहुँचा दे। किन्तु अब हमें फिर फ्रांस के काम पर विचार करके यह देखना चाहिए कि उसने इनमें से किन उपायों का अवलंबन किया। इस विषय में मैं चार्ल्स का ज़िक्र कम करके लुई ही का हाल अधिक लिखूँगा क्योंकि लुई ने इटली में अधिक दिनों राज्य किया और उसकी कार्रवाइयाँ अच्छी तरह समझ में आ सकती हैं। उसके कामों पर दृष्टि डालने से मालूम होगा कि विदेशी राज्य पर अपना अधिकार जमाये रखने के लिए जो जो कार्रवाइयाँ करनी चाहिए, उसने उन सबके विरुद्ध काम किये। लुई को वीनिसवालों ने इस लालच से इटली में आमन्त्रित किया था कि उन्हें उसके आने से लम्बार्डी का आधा हिस्सा मिल जायगा। मैं लुई पर इटली में जाने के लिए दोष-

रोपण न करूँगा। यह कहना काफ़ी है कि वह इटली में अपना पैर जमाना चाहता था और वहाँ उसके कोई मित्र नहीं थे। मित्र तो दरकिनार, चार्ल्स के वर्ताव से वहाँ सब फ़्रांस के दुश्मन हो गये थे। इसलिए उसे जैसा भी मित्र मिला, उसी से सन्तुष्ट होना पड़ा और यदि उसने अपनी दूसरी कार्रवाइयों में भूलें न की होतीं तो उसका षड्यन्त्र शीघ्र ही सफल हो गया होता।

लम्बार्डी की विजय से लुई ने उस कीर्ति को फिर से स्थापित कर लिया, जो चार्ल्स ने खो दी थी। उसकी इस विजय से जिनोआ ने उसकी अधीनता स्वीकार कर ली, फ़्लोरेंस के लोग उसके मित्र हो गये, मैन्टुआ के मार्क्विस, फ़रारा और वैण्टिवोग्ली के ड्यूक, फ़ूर्ली की लेडी, फ़ींज़ा, पिसारो, रीमिनी, कैमिरीनो और पिअम्बिनो के लार्ड, तथा लुक्का, पाइसा और साइना के निवासी उससे मित्रता करने को तैयार हो गये। उस समय वीनिसवालों को अपनी कायरता का नतीजा मालूम हुआ होगा; उन्होंने लम्बार्डी में थोड़ी सी ज़मीन के लिए लुई को वहाँ का दो तिहाई राज्य सौंप दिया। अब यह सोचो कि यदि लुई ऊपर बतलाये हुए नियमों का पालन करता और अपने इन बहुत से मित्रों को अपने क़ब्ज़े में रखता तो उसे इटली में अपना रोब बनाये रखने में बड़ी आसानी होती। क्योंकि ये सभी कमज़ोर थे, कुछ पोप से डरते थे और कुछ वीनिसवालों से घबड़ाते थे। इस कारण यदि लुई चाहता तो ये लोग सदा उसके मित्र बने रहते और इनकी सहायता से वह बड़े बड़ों को क़ाबू में ला सकता था।

किन्तु वह मिलन में भी अच्छी तरह नहीं पहुँचने पाया था कि उसने इन नियमों के विरुद्ध कार्रवाई करनी शुरू कर दी—उसने पोप अलेक्ज़ण्डर को रोमग्ना पर क़ब्ज़ा करने में सहायता दी। उसे यह न सूझा कि इस कार्रवाई से वह अपनी जड़ अपने आप काट रहा है; इससे उसके मित्र भड़क जायँगे और वे लोग जिन्होंने अपने को उसके ऊपर निर्भर कर दिया था, उसके शत्रु बन जायँगे तथा उसकी इस कार्रवाई से चर्च (पोप) की आध्यात्मिक शक्ति के साथ साथ राजनैतिक शक्ति भी बढ़ जायगी। एक बार भूल करके, उसे बार बार वही ग़लती करनी पड़ी और टस्कनी को पोप के पंजे से बचाने के लिए उसे इटली में फिर आना पड़ा। पोप की शक्ति बढ़ाकर और मित्रों को अपना शत्रु बनाकर ही उसे संतोष नहीं हुआ, उसने और भी ग़लती की। उसकी आँख नेपल्स पर पड़ी और उसने स्पेन के राजा के साथ मिलकर उसे आपस में बाँट लिया। इसका परिणाम यह हुआ कि अभी तक इटली में वही अकेला हर्ता कर्ता था, अब उसने स्वयं अपना एक प्रतिद्वंद्वी बुला लिया और अब से उन लोगों को, जो उससे असंतुष्ट थे, एक रक्षक और सहायक मिल गया। नेपल्स के राजा को यदि वह चाहता तो अपना अधीनस्थ करके छोड़ सकता था, किन्तु उसने उसकी जगह पर अपनी बराबरी का एक राजा ला बैठाया जिसमें स्वयं उसे निकाल बाहर करने की शक्ति थी। दूसरे देशों को अपने अधीन करने की इच्छा बहुत ही स्वाभाविक और साधारण बात है और जो लोग इस इच्छा को पूरी करने

समझनी चाहिए, प्रत्युत यही बात स्वाभाविक है। जब सीज़र बोर्जिया रोमग्ना पर अधिकार जमाये हुए था तब मैंने इस बात का ज़िक्र नान्ट्स में कार्डिनल रोहन से किया था। उन्होंने कहा कि इटलीवाले लड़ाई का तत्त्व नहीं समझते। इस पर मैंने उन्हें उत्तर दिया कि असल में वे राजनीति के तत्त्व नहीं समझते क्योंकि यदि वे उन्हें समझते होते तो कभी भी धार्मिक संस्था (चर्च) को इतना न बढ़ जाने देते। विचार करने से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि इटली में चर्च और स्पेन की बढ़ती का कारण फ्रांस है और स्वयं उसकी दुर्दशा के कुल कारण यही दो हैं। इससे यह नियम बनाया जा सकता है कि जो दूसरों की दुर्दशा करवाता है वह स्वयं नष्ट हो जाता है क्योंकि दूसरों की दुर्दशा केवल मक्कारी या शक्ति से कराई जा सकती है, और जो शक्तिमान् हो जाता है वह दूसरों में इनके होने का सदा सन्देह किया करता है।

चौथा अध्याय

फ़ारस के बादशाह दारा के साम्राज्य को सिकन्दर ने जीत लिया था। किन्तु सिकन्दर के मरने के बाद दारा के साम्राज्य ने सिकन्दर के उत्तराधिकारियों के विरुद्ध विद्रोह क्यों नहीं किया?

हाल के जीते हुए देश पर क़ब्ज़ा करने की कठिनाइयों का विचार करके कुछ लोगों को इस बात का बड़ा आश्चर्य होगा कि यद्यपि सिकन्दर थोड़े ही समय में एशिया का स्वामी हो गया और इसके बाद शीघ्र ही मर गया तो भी वहाँ के निवासियों ने ग्रीकों के विरुद्ध बलवा नहीं किया। सिकन्दर के मरने के बाद उसके उत्तराधिकारी बराबर अपनी हुकूमत जमाये रहे और उन्हें अपने आपस के झगड़ों के कारण जो कठिनाइयाँ हुईं उनको छोड़कर प्रजा की ओर से उन्हें कुछ कष्ट नहीं उठाना पड़ा।

इस विषय में मेरा उत्तर यह है कि इतिहास के देखने से यह पता लगता है कि राज्यों का शासन दो प्रकार से किया जाता है। शासन की एक प्रथा तो यह है कि राजा अपने उन मंत्रियों की सहायता से राज्य करता है जो उसकी कृपा के कारण मंत्रि-पद पर

बने हुए हैं। दूसरी प्रणाली यह है कि राजा अपने सरदारों की सहायता से राज्य करता है, किन्तु ये सरदार उसकी कृपा पर निर्भर नहीं रहते। इनका उससे ख़ून का रिश्ता होता है। ये सरदार भी अपनी रियासत के राजे होते हैं—उनकी प्रजा उनको अपना स्वामी समझती है और स्वभावतः उनसे स्नेह करती है। पहले तरह के राज्यों में, जहाँ राजा मंत्रियों की सहायता से राज्य करता है, राजा अधिक शक्तिशाली होता है क्योंकि उसके राज्य में और कोई ऐसा व्यक्ति नहीं होता जिसे प्रजा (का कोई अंश भी) अपना स्वामी समझता हो। मंत्रियों की आज्ञा का पालन लोग उन्हें राजा का कर्मचारी समझकर ही करते हैं और उनका उन पर कोई विशेष स्नेह नहीं होता। हमारे समय में इन दो प्रणालियों का शासन तुर्क और फ़्रांसीसी राज्यों में पाया जाता है। तुर्कों के राज्य में केवल एक राजा है, बाक़ी सब उसके सेवक हैं। सुलतान अपने राज्य को ज़िलों में बाँटकर उनका शासन करने के लिए उनमें शासकों को नियुक्त करके भेजता है, इच्छानुसार उनकी बदली करता है, और जब उसकी मर्ज़ी होती है तब उन्हें वापस बुला लेता है। किन्तु फ़्रांस का राजा बहुत से पुराने सरदारों से घिरा हुआ है। फ़्रांस की प्रजा इन सरदारों को मानती है और उनसे स्नेह करती है। इन सरदारों के हक़ों को फ़्रांस का राजा नहीं छीन सकता और यदि कभी छीनने की हिम्मत भी करे तो उसे बड़े ख़तरों का सामना करना पड़े। इन दोनों देशों के देखने से पता लग जायगा कि तुर्कों का राज्य छीन लेना बड़ा कठिन

काम है। किन्तु यदि उसे जीत लिया जाय तो उस पर क़ब्ज़ा क़ायम रखना सहल है।

तुर्कों का राज्य जीतने की कठिनाइयाँ ये हैं कि उस राज्य के सरदार आक्रमणकारी को निमन्त्रण नहीं दे सकते और न हमला करनेवाले को सरदारों के विद्रोह से लाभ उठाने का ही मौक़ा मिलेगा। उसके कर्मचारी नौकर होने के कारण फोड़े नहीं जा सकेंगे और यदि फोड़ भी लिये जायँ तो उपरोक्त कारणों से प्रजा उनका साथ नहीं देगी। अतएव जो लोग तुर्कों पर हमला करना चाहें उन्हें अपनी शक्ति पर भरोसा रखके तुर्कों की कुल शक्ति का सामना करने का बल रखकर हमला करना चाहिए। उन्हें तुर्कों के आन्तरिक झगड़ों से लाभ उठाने की आशा न करनी चाहिए। किन्तु यदि युद्ध में सुलतान हरा दिया जाय और उसे इतना बेकाम कर दिया जाय कि वह सेना न जमा कर सके तो सिवाय राजघराने के और किसी से डरने की ज़रूरत नहीं है। और यदि राजघराना भी साफ़ कर दिया जाय तो फिर किसी का भय न रह जाय क्योंकि और लोगों का प्रजा पर कुछ प्रभाव ही नहीं है। जिस प्रकार युद्ध के पहले विजेता को इनसे किसी प्रकार की आशा नहीं थी, उसी प्रकार युद्ध के बाद उसे इनसे किसी प्रकार का भय भी न रह जायगा। किन्तु फ़्रांस के ढङ्ग पर शासित होनेवाले देशों का हाल इसके विपरीत है। इन देशों में थोड़े से सरदारों को फोड़ लेने से घुस जाना सरल हो जाता है क्योंकि सरदारों में अवश्य ही कुछ न कुछ असन्तुष्ट रहते ही हैं, और कुछ ऐसे भी होते हैं

जो परिवर्तन पसन्द करते हैं। ये लोग चढ़ाई करनेवाले से मिलकर उसकी सहायता करने लग जाते और देश जीतने में उसकी सहायता करते हैं। किन्तु इसके बाद जब उस देश पर अधिकार करने का सवाल आता है तब ये सरदार, जिन्होंने चढ़ाई करनेवालों की सहायता की थी, और वे दूसरे सरदार, जो उसके विरुद्ध लड़े थे, उसके मार्ग में असंख्य कठिनाइयाँ उत्पन्न कर देते हैं। ऐसे देशों में राजघराने को नष्ट कर देने से भी काम नहीं चल सकता, क्योंकि वहाँ वे सरदार मौजूद हैं जिन्हें न तो तुम नष्ट कर सकते हो और न सन्तुष्ट कर सकते हो, और जो मौक़ा मिलते ही मुखिया बन बैठने को तैयार हैं। इसलिए ज़रा सी बात होते ही ऐसा राज्य तुम्हारी मुट्ठी में से निकल जायगा। अब यदि तुम दारा की बादशाहत पर विचार करो तो तुम्हें मालूम होगा कि उसका राज्य भी तुर्कों के राज्य की तरह ही था। अतएव सिकन्दर को पहले तो उसका राज्य जीतने में बड़ी दिक़्क़त हुई, किन्तु जीत हो जाने पर और दारा की मृत्यु के उपरान्त उपरोक्त कारणों से बाद में उसका राज्य सिकन्दर के क़ब्ज़े में बना रहा। और यदि उसके उत्तराधिकारी आपस में कलह न करते तो आनन्दपूर्वक राज्य का उपभोग करते रहते। किन्तु फ़्रांस के समान देशों को इस सरलता से जीतना कठिन है।

अतएव स्पेन, फ़्रांस और ग्रीस में बहुत से सरदारों के होने के कारण रोमन लोगों के विरुद्ध बराबर विद्रोह होते रहे, क्योंकि जब तक लोगों को इनकी याद बनी रही तब तक रोमनों को

अपनी सत्ता की दृढ़ता में सदा सन्देह बना रहा। किन्तु जब इन सरदारों की स्मृति का नाश हो गया तो साम्राज्य की शक्ति और अवस्था के कारण रोमनों का अधिकार भी दृढ़ हो गया।

और बाद में जब रोमन लोग आपस में लड़ने लगे तो हरएक दल ने साम्राज्य के उस प्रान्त को, जिसमें उन्होंने अपना अधिकार जमा रखा था, अपनी ओर कर लिया। अब ये प्रांत भी सिवाय रोमनों के और किसी को अपना शासक नहीं मानते थे क्योंकि उनके प्राचीन राजवंश नष्ट हो चुके थे। इन बातों का ध्यान रखने से इस बात पर कुछ भी आश्चर्य नहीं करना चाहिए कि सिकन्दर ने एशिया पर सरलता से अधिकार कर लिया था। पिरहस आदि को अपने जीते हुए स्थानों पर क़ब्ज़ा करने में बड़ी कठिनाइयाँ हुईं क्योंकि सरलता और कठिनाई जेता की योग्यता पर निर्भर नहीं थीं किन्तु विजित स्थानों की अवस्था पर निर्भर थी।

पाँचवाँ अध्याय

उन देशों या नगरों पर शासन करने की रीति जो जीते जाने के पहले अपने बनाये नियमों से शासित होते थे।

ऐसे राज्यों पर शासन करने की—जो जीते जाने के पहले अपने बनाये क़ानूनों का पालन करते हुए स्वतन्त्रतापूर्वक रहते थे—तीन रीतियाँ हैं। पहली रीति तो यह है कि उनको नष्ट कर दो; दूसरी यह है कि वहाँ जाकर स्वयं रहने लगो; और तीसरी यह है कि कर लेकर उसमें कुछ ऐसे लोगों को बसा दो जो तुम्हारे पक्ष के हों और समय पड़ने पर तुम्हारी सहायता करें। इस प्रकार से जो रियासत क़ायम की जायगी वह यह अच्छी तरह जानती है कि उसका जीवन सहायता पर निर्भर है, और, इस कारण वह तुम्हारी सहायता और मित्रता पाने के लिए सदा उत्सुक रहेगी। अब यदि किसी स्वतन्त्र नगर पर अधिकार करना है तो सबसे सरल उपाय यह है कि उस पर वहाँ के नागरिकों द्वारा शासन किया जाय। इस विषय में स्पार्टन और रोमनों का उदाहरण बहुत उपयुक्त है। स्पार्टन लोगों ने एथेन्स और थीबिस नगरों पर उनके अन्दर थोड़े से लोगों की छोटी छोटी रियासतें बनाकर अपना अधिकार क़ायम रखा; किन्तु अन्त में वे उनके

हाथ से निकल गये। इसके विपरीत रोमन लोगों ने कैपुआ, कार्थेज और नुमान्टिया पर अधिकार करने की इच्छा से उनको नष्ट कर दिया, किन्तु उनको अपने हाथ से नहीं जाने दिया। उन्होंने ग्रीस पर स्पार्टन लोगों की तरह शासन करना चाहा अर्थात् उसे अपने नियम और क़ानून बर्त्तने को स्वतंत्र कर दिया, किन्तु इसमें उन्हें सफलता नहीं हुई। अतएव उन्हें अपना अधिकार बनाये रखने के लिए बहुत से नगरों को नष्ट करना पड़ा क्योंकि वास्तव में ऐसे नगरों पर क़ब्ज़ा जमाये रखने का एक ही उपाय है और वह है—उनको नष्ट कर डालना। इसके सिवाय और कोई चारा नहीं है। और जो व्यक्ति किसी स्वतंत्र नगर को जीतकर उसको नष्ट नहीं कर देता, उसे वह नगर अवश्य नष्ट कर डालता है; क्योंकि उसे सदा स्वतन्त्रता और अपने प्राचीन रीति-रिवाजों की दुहाई देकर विद्रोह करने का मौक़ा मिल सकता है। और ये ऐसी बातें हैं जिन्हें नागरिक कभी भी नहीं भूल सकते। उनके साथ चाहे कितनी ही भलाई की जाय, किन्तु जब तक उन्हें तितर-बितर नहीं कर दिया जाता तब तक वे स्वतन्त्रता का नाम और अपनी प्राचीन रस्मों को नहीं भूलते और अवसर पाते ही उनकी दुहाई देने लगते हैं। फ्लोरैंसवाले पाइसा पर बहुत दिनों तक अधिकार जमाये रहे पर अन्त में उपरोक्त कारणों से पाइसा-निवासियों ने उन्हें निकाल बाहर किया। किन्तु जब इस प्रकार के नगर या प्रदेश किसी (विदेशी) राजा के शासन में रहने के आदी हो जाते हैं, और जब उसका वंश नष्ट हो जाता है, तब वे एक तो अपने

में से किसी को राजा नहीं चुन सकते, दूसरे वे स्वतन्त्रतापूर्वक रहना भूल जाते हैं। अतएव वे शीघ्रता के साथ लड़ने भिड़ने को भी तैयार नहीं हो पाते और कोई भी राजा सरलतापूर्वक उन पर अधिकार जमा सकता है। किन्तु प्रजासत्ताक राज्यों में अधिक जीवन, अधिक घृणा और प्रतिहिंसा की मात्रा भी अधिक होती है। वे अपनी प्राचीन स्वतन्त्रता की स्मृति नहीं भुला सकते। अतएव उनको विजय करने का सर्वोत्तम उपाय यह है कि या तो उन्हें नष्ट कर दिया जाय, या स्वयं उनमें जाकर रहा जाय।

———

छठवा अध्याय

नये राज्यों के बारे में जिन्हें जेता ने अपने बाहुबल से जीता है।

नये राज्यों का वर्णन करते हुए मैं बहुत ही उच्च कोटि के राजाओं और राज्यों का वर्णन करूँगा। इस पर किसी को आश्चर्य न करना चाहिए। इसका कारण यह है कि लोग सदा दूसरों के बनाये रास्ते पर चलते और दूसरे के कामों की नक़ल करते हैं, किन्तु वे उनकी पूरी पूरी नक़ल नहीं कर पाते। तो भी बुद्धिमान् व्यक्ति को चाहिए कि वह सदा बड़े आदमियों के चले हुए रास्ते पर चले और उन महापुरुषों की नक़ल करे जो सर्वोत्तम थे, जिससे यदि वह उनके समान बड़ा न हो सके तो कम से कम उस बड़ाई का कुछ अंश तो उसे अवश्य ही मिल जाय। बुद्धिमान् तीरन्दाज़ भी यही करते हैं। जब उन्हें मालूम होता है कि उन्हें बहुत ऊँचाई पर निशाना लगाना है और वहाँ तक उनका तीर नहीं जायगा तो वे उससे भी ऊँचा निशाना मारने की कोशिश करते हैं, जिससे अभ्यास के कारण यदि इतना ऊँचा नहीं तो कम से कम अपेक्षित ऊँचाई तक तो उनका तीर पहुँच ही जाय। इसलिए मैं कहता हूँ कि जब कोई नया व्यक्ति किसी नये राज्य पर अधिकार जमाता है तो उस अधिकार का क़ायम रखना उस व्यक्ति की योग्यता

पर निर्भर है। जब कोई साधारण व्यक्ति राजा हो जाता है तो यह अवश्य ही मानना पड़ेगा कि या तो उसमें कुछ विशेष योग्यता है, या वह बड़ा ही भाग्यशाली है। यदि इनमें से एक भी बात हुई तो उसके कारण उसकी बहुत सी कठिनाइयाँ दूर हो जायँगी। फिर भी यह देखा गया है कि जो लोग बड़े भाग्यशाली नहीं थे, वे ही सबसे अधिक सफल रहे हैं। उनकी सफलता का एक कारण यह भी है कि ऐसे नये शासकों के पास और कोई राज्य तो होता नहीं इसलिए उन्हें लाचार होकर स्वयं अपने नये जीते हुए राज्य में रहना पड़ता है। किन्तु जो लोग किसी सौभाग्य या संयोग के कारण नहीं, बल्कि अपनी योग्यता से राजा बन बैठे हैं, उनमें मैं मूसा, साइरस (Cyrus), रोमुलस, थीसियस आदि को सब से बड़ा समझता हूँ। इनमें से मूसा के बारे में अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है। क्योंकि मूसा ने ईश्वर की आज्ञा का पालन किया था, तो भी हमें मूसा की इस बात की अवश्य ही प्रशंसा करनी पड़ेगी कि उन्होंने अपने को इस योग्य तो बना लिया कि ईश्वर ने उनसे बात करना उचित समझा। किन्तु साइरस आदि राज्य स्थापना करनेवालों के चरित्रों में प्रशंसा के योग्य बहुत सी बातें मिलेंगी और यदि उनके उपायों का मूसा के उपायों से मिलान किया जाय तो (मूसा के इतने बड़े गुरु के होते हुए भी) दोनों में कोई विशेष अन्तर नहीं मालूम होगा। अब यदि हम इन लोगों के चरित्र और कामों की तुलना करें तो विदित होगा कि वे कुछ विशेष भाग्यशाली नहीं थे। जिस प्रकार वे काम

करना चाहते थे, उन्हें वैसा करने का अवसर मिल गया। उस सुअवसर या संयोग के विना उनकी योग्यता वेकाम जाती और यदि उनमें योग्यता न होती तो उस सुअवसर या संयोग का होना व्यर्थ था। अतएव मूसा के समय में इसराइल लोगों का मिस्र की गुलामी में जकड़े रहना आवश्यक था, जिससे छुटने के लिए वे लोग मूसा का आज्ञापालन करने को तैयार हो गये। रोम की स्थापना के लिए यह आवश्यक था कि रोमुलस अलवा में पैदा होकर भी वहाँ न रहने पावे और वहाँ से वचपन ही में भगा दिया जाय जिससे वह रोम को स्थापित करके रोमन जाति का उत्पादक हो जाय। साइरस के उत्थान के लिए यह आवश्यक था कि जिस समय वह उत्पन्न हो, उस समय फ़ारसवाले मीड्स लोगों के शासन से असंतुष्ट हो रहे हों और चिरकालीन शान्ति के कारण मीड्स कमज़ोर और ज़नाने वन गये हों तथा यदि एथेन्स के निवासी तितर-वितर न हो रहे होते, तो थिसियस को अपनी योग्यता दिखलाने का अवसर न मिलता।

इन अवसरों के कारण इन लोगों को मौक़ा मिल गया और अपनी योग्यता के कारण वे इन अवसरों से लाभ उठाकर अपने देश को उन्नत कर सके। इस प्रकार वहादुरी के काम करके जो लोग राजा होते हैं उन्हें राज्य स्थापित करने में पहले ज़रूर कठिनाई होती है, किन्तु राज्य स्थापित हो जाने पर उसके शासन करने में उन्हें अधिक कठिनाई नहीं होती, और जो कठिनाइयाँ इन लोगों को पड़ीं उनका कारण यह था कि उन्हें अपनी

स्थिति सुरक्षित करने के लिए नये क़ानून बनाने पड़े थे। यह सदा याद रखना चाहिए कि नई बातों के आरम्भ करने में जितनी कठिनाई पड़ती है और जितना खटका रहता है उतना और किसी काम के करने में नहीं होता। जिन लोगों को पुरानी बातों से लाभ होता है, वे नई व्यवस्था करनेवाले सुधारक के शत्रु हो जाते हैं। और जिन लोगों को नई व्यवस्था से लाभ होता है वे केवल ऊपरी मन से उसके मित्र बने रहते हैं; क्योंकि उनको एक तो अपने विपक्षियों का भय बना रहता है जिनके पक्ष में देश का पुराना क़ानून होता है, दूसरे उनमें मनुष्य के स्वभावोचित अविश्वास की जड़ जमी रहती है और मनुष्य का नई बातों के बारे में यह संदेह तब तक दूर नहीं होता जब तक उसे उसका पूरा पूरा अनुभव न हो जाय। अतएव बेचारे सुधारक को अपने शत्रुओं के घोर आक्रमण का सामना करना पड़ता है और उसके पक्षवाले केवल ऊपरी मन से उसकी सहायता करते हैं। इन दोनों के बीच में पड़कर उसकी बुरी हालत हो जाती है और वह ख़तरे में पड़ जाता है। पर इस प्रश्न पर पूर्ण विचार करने के लिए यह बात जानना आवश्यक है कि सुधारक स्वतन्त्र हैं अथवा परतन्त्र हैं अर्थात् अपने इच्छानुसार व्यवस्था चलाने के लिए उन्हें दूसरों की ख़ुशामद करने की ज़रूरत है या वे अपने बल से उसे चला सकते हैं। पहिली हालत में वे बराबर असफल होते हैं और उनका नतीजा कुछ नहीं निकलता। किन्तु यदि व्यवस्था चलाने के लिए वे शक्ति का उपयोग कर सकते हैं तो उनको असफलता कम ही मामलों में होती है।

इसका प्रमाण यह है कि सशस्त्र पैग़म्बरों की सदा जीत हुई है और निःशस्त्र पैग़म्बर सदा असफल रहे हैं। जो बातें ऊपर कही जा चुकी हैं उनके अलावा मनुष्यों की एक प्रकृति यह भी होती है कि उन्हें एक बात का जोश दिलाना तो सहल है पर उनमें उस जोश का क़ायम रखना मुश्किल है। और इसलिए यह आवश्यक है कि जब वे किसी बात को मानने में आनाकानी करें तो उनसे ज़बर्दस्ती मनवाया जाय। मूसा, साइरस, थिसियस और रौमुलस यदि निःशस्त्र होते तो उनकी संस्थाओं को लोग इतने दिनों तक कभी न मानते। इसका प्रमाण हमारे समय में ही मौजूद है। सैवनरोला के आदेशों को पहले लोग मानने लगे, किन्तु जब जनता उस पर अविश्वास करने लगी तो उसके पास विश्वास करनेवालों को एकत्रित रखने और, विश्वास न करनेवालों को ज़बर्दस्ती विश्वास कराने का कोई साधन न था। परिणाम यह हुआ कि उसका सारा उद्योग नष्ट हो गया। अतएव ऐसे लोगों को कठिनाइयाँ उत्पन्न होने पर अपनी योग्यता ही से उनका निवारण करना पड़ता है। किन्तु जब एक बार वे उन कठिनाइयों को हल कर लेते हैं और अपने से ईर्ष्या करनेवालों को नष्ट कर देते हैं तथा लोग उनकी इज़्ज़त करने लग जाते हैं तब वे आनन्द और सम्मानपूर्वक शक्तिशाली होकर अपना जीवन व्यतीत करते हैं। उपर्युक्त उच्च उदाहरणों के सिवाय मैं उनसे छोटा एक और उदाहरण साइराक्यूज़ के जिरोम का दूँगा। यह व्यक्ति केवल मौक़ा पाकर साइराक्यूज़ का राजा बन बैठा था। साइराक्यूज़ के निवासी अत्याचार-पीड़ित थे, उन्होंने उसे अपना

का उपाय भी नहीं जानते। वे शासन भी नहीं कर सकते क्योंकि उनके पास स्वामिभक्त सेना भी नहीं होती। इसके सिवाय शीघ्र उत्पन्न होनेवाले पेड़ों की तरह शीघ्रता से बनाई हुई रियासतों की नींव भी गहरी और दृढ़ नहीं होती और वे पहली ही आँधी में गिर पड़ती हैं। हाँ, यदि ऐसा राजा असाधारण योग्यता का हुआ और सौभाग्य से पाये हुए राज्य को दृढ़ करने के लिए उसने तुरन्त उपाय किये, तथा राज्य पाने के बाद उसने वे नींवें डालीं जिन्हें दूसरे राज्य पाने के पहले डालते हैं तो उसका राज्य नया और शीघ्रता से बनने पर भी स्थिर हो सकता है। योग्यता या सौभाग्य से राजा होने के मैं दो ऐसे उदाहरणों को लूँगा जो अभी हाल ही के हैं। अर्थात् मैं फ्रांसिस्को स्फोर्जा और सीज़र बोर्जिया के उदाहरण दूँगा।

उचित उपायों और अपनी महान् योग्यता के कारण फ्रांसिस्को एक साधारण व्यक्ति से मिलन का ड्यूक हो गया। जिस राज्य को उसने हज़ारों कठिनाइयों से पाया था उसको उसने बड़ी सरलता से क़ायम रखा। इसके विपरीत सीज़र बोर्जिया ने (जो साधारणतः ड्यूक वैलेण्टाइन के नाम से प्रसिद्ध है) अपने पिता के सौभाग्य से राज्य पाया और यद्यपि उसने अपने राज्य को दृढ़ करने के लिए सभी उचित और उपयुक्त उपाय किये फिर भी जिस कारण से उसने राज्य पाया था उसी के द्वारा वह उसके हाथ से निकल गया। मैं पहले ही कह चुका हूँ कि जिस व्यक्ति ने पहले ही अपनी नींव नहीं डाली वह यदि योग्य हुआ तो पीछे उसे डाल लेता है। किंतु

इसमें उस व्यक्ति और इमारत दोनों को ही बड़ा ख़तरा रहता है। इस अवस्था का ध्यान रखकर यदि देखा जाय तो मालूम होगा कि ड्यूक ने अपने भविष्य राज्य की कितनी दृढ़ नींव डाली थी, तथा उसके उपाय इतने अच्छे थे कि उनसे बढ़कर और कोई शिक्षा किसी नवीन राजा को नहीं दी जा सकती। इस कारण मैं उनका विस्तृत वर्णन करूँगा। अवश्य ही ड्यूक को सफलता नहीं हुई, किन्त इसमें उसका कोई कसूर नहीं है—ऐसे असाधारण दुर्दैव आ पड़े कि उन पर उसका कोई चारा नहीं था। ड्यूक को राज्य देने में उसके पिता अलेक्ज़ेण्डर छठवें को वर्तमान और भविष्य सभी तरह के ख़तरों का सामना करना पड़ा था। पहली बात तो यह थी कि उस समय चर्च की रियासत के बाहर ऐसी कोई रियासत न थी जो उसे दी जा सके, और चर्च की रियासतों में से कोई रियासत लेने से वह जानता था कि मिलन का ड्यूक और वीनिस-वाले नाराज़ हो जायँगे क्योंकि फ़ेंजा और रेमिनी—दोनों ही—वीनिसवालों की संरक्षकता में थे। इसके सिवाय उसने यह देखा कि तत्कालीन इटली में जो शक्तिशाली लोग थे वे प्रायः सभी ओर्सिनस और कोलोनस के अधिकार में थे और पोप से डरते थे, इसलिए वह उनकी सहायता की आशा नहीं कर सकता था। अतएव इटली में अव्यवस्था फैलाना आवश्यक था, जिससे उस गड़बड़ी में इटली के किसी हिस्से पर निष्कण्टक अधिकार जमाया जा सके। यह काम सरल था क्योंकि उस समय अन्यान्य कारणों से वीनिस-वालों ने फ़्रांस के राजा को इटली में बुला भेजा था। उसने

(अलक्ज़ेण्डर ने) इस बात का विरोध करना तो एक ओर रहा, उलटे लुई का विवाह नाजायज़ ठहरा कर, उसमें सहायता दी। इस प्रकार फ़्रांस का राजा इटली में वीनिसवालों की सहायता और अलेक्ज़ेण्डर की सम्मति से घुस आया। और वह मिलन में भी अच्छी तरह न पहुँचने पाया था कि पोप ने रोमग्ना पर अधिकार करने के लिए उससे सैनिक सहायता माँग ली। राजा के दबदबे के कारण रोमग्ना पर अधिकार करने में उसे अधिक कठिनता नहीं हुई। ड्यूक सीज़र बोर्जिया ने इस प्रकार रोमग्ना पर अधिकार कर लिया और कोलोनस को हरा दिया, किन्तु अपना क़ब्ज़ा क़ायम रखने और आगे बढ़ने में उसे दो रुकावटें दिखलाई पड़ने लगीं। पहली रुकावट तो उसकी सेना थी क्योंकि उसकी स्वामि-भक्ति पर उसे विश्वास नहीं था, दूसरे फ़्रांस की इच्छा। अर्थात् उसे यह भय था कि जिस ओर्सिनी के बल से उसे राज्य मिला है वह कहीं उससे छिन न जाय जिसका परिणाम यह होगा कि अभी तक उसने जो राज्य पाया था वह भी चला जायगा। फ़्रांस के राजा से भी उसे यही भय था। ओर्सिनी की इस हिचकिचाहट का सबूत उसे उस समय मिला जब फ़ेंज़ा पर क़ब्ज़ा करने के बाद उसने बोलोग्ना पर हमला किया। उस हमले में ओर्सिनी-वाले आनाकानी करने लगे। फ़्रांस के राजा की ओर से उसे जो आशंका थी उसका प्रमाण उसे तब मिला जब वह उर्बीनो की ड्यूकडम को जीतकर टस्कनी पर आक्रमण करने चला और जब फ़्रांस के राजा ने उसे आक्रमण करने से रोक

दिया। तब से ड्यूक ने यह निश्चय किया कि अब मैं किसी दूसरे की सहायता पर निर्भर नहीं रहूँगा। अतएव उसने पहली बात तो यह की कि कोलोनस और ओर्सिनिस के रोम में रहनेवाले भले आदमियों को अपनी ओर फोड़ लिया। उसने उन्हें बड़ी बड़ी पेंशनें दीं और उनकी पद-मर्यादा के अनुसार उन्हें सेना में जगह दी। इसका परिणाम यह हुआ कि थोड़े ही दिनों में वे लोग कोलोनस तथा ओर्सिनिस की ओर से विमुख होकर उसके भक्त हो गये। कोलोना वंश के सहायकों को तितर-बितर करके वह ओर्सिनी वंश को नष्ट करने का मौक़ा तलाश करने लगा और जैसे ही उसे मौक़ा मिला वैसे ही उसने उससे पूरा फ़ायदा उठाया। क्योंकि जब ओर्सिनी वंशवालों ने देखा कि ड्यूक और चर्च की बढ़ती के परिणाम में उनका सर्वनाश हो जायगा तो उन्होंने पेरिग्यूनो ज़िले के मैगिओन में एक सभा आमंत्रित की। इस कारण उर्बानो और रोमग्ना में बलवा हो गया जिससे ड्यूक ख़तरे में पड़ गया, किन्तु उसने फ़्रैंच की सहायता से उसको नष्ट कर दिया। और जब उसकी धाक जम गई तब उसने फ़्रांस तथा अन्य विदेशी लोगों का भरोसा करना छोड़ दिया। किन्तु प्रत्यक्ष रूप से विरोध करने में बुराइयाँ देखकर उसने षडयंत्र करना शुरू किया। उसने अपने उद्देश्यों को इस ख़ूबी के साथ छिपा रक्खा कि सीनोर पैवोला के बीच-बिचाव करने से ओर्सिनीवालों ने उससे संधि करली और ड्यूक ने उन्हें धन, बढ़िया-बढ़िया कपड़े, घोड़े आदि देकर इतना बेवकूफ़ बनाया कि वे अपनी सिधाई के

कारण सिनिगेग्लिया में आने को राज़ी हो गये, और जैसे ही वे वहाँ आये वैसे ही उसके पंजे में पड़ गये। अतएव इस प्रकार इन मुखियों को नष्ट करके और उनके पिछलगू लोगों को अपनी ओर फोड़कर रोमग्ना और उर्बीनों में ड्यूक ने अपने राज्य की अच्छी नींव जमा दी और वहाँ के निवासी भी उसके शासन से लाभ उठाकर उसकी ओर हो गये। और चूँकि इस बात की नक़ल औरों को करनी चाहिए, मैं इसका अच्छी तरह उल्लेख करूँगा। उसके अधिकार में आने के पहले रोमग्ना के शासक कमजोर थे और वहाँ लूटमार, गड़बड़ी आदि मची रहती थी। अतएव उसने उन्हें शान्त और आज्ञाकारी बनाने के लिए वहाँ का शासन ठीक तरह से करना उचित समझा। इस आशय से उसने वहाँ का पूर्ण शासन-भार रेमीरो डी आर्को नामक एक क्रूर किन्तु योग्य व्यक्ति को सौंप दिया। इस व्यक्ति ने थोड़े ही दिनों में उस प्रांत में अमन-चैन स्थापित कर दिया। अब ड्यूक ने यह सोचा कि इससे आगे चलकर लोगों में उसके प्रति कहीं घृणा पैदा न हो जाय। इसलिए उसने वहाँ के एक केन्द्रीय स्थान में एक अदालत बनाई। इस अदालत में उसने एक बहुत ही योग्य व्यक्ति को न्यायाधीश बनाया और हर एक शहर से एक-एक वकील उसमें बुलाया गया। उसे यह मालूम था कि पिछली सख्ती के कारण लोगों में कुछ असन्तोष फैल गया है। अब उसने लोगों को प्रसन्न करने के लिए यह दिखाना चाहा कि जो कुछ कड़ाई हुई है वह उसकी आज्ञा से नहीं हुई बल्कि उसके कर्मचारी (रेमीरो डी आर्को) की

क्रूरता के कारण हुई है। अतएव उसने एक दिन कुछ बहाना बतलाकर उसको मरवा डाला और उसकी लाश के दो टुकड़े करा कर उसे सेसना नगर के चौराहे पर रखवा दिया और उसके बग़ल में लकड़ी का एक टुकड़ा तथा ख़ून से सना हुआ एक चाकू डलवा दिया। इस दृश्य की भयंकरता के कारण लोगों में सन्तोष और आश्चर्य फैल गया।

जब ड्यूक अपने को शक्तिशाली बना चुका और तत्कालीन ख़तरों से अपनी रक्षा का थोड़ा बहुत उपाय कर चुका, अर्थात् सशस्त्र होकर उसने आस पास के उन लोगों को दबा दिया जिनसे भविष्य में उसे हानि की आशंका थी, तब उसने यह सोचा कि अब यह आवश्यक है कि फ़्रांस मुझसे डरने लगे। क्योंकि उसे यह मालूम हो गया था कि वहाँ का राजा अपनी ग़लती समझ गया है और आगे उसकी सहायता न करेगा। इस लिए उसने दूसरी शक्तियों से मित्रता करनी आरम्भ की और जब फ़्रांसीसी लोग नेपल्स की ओर बढ़ने लगे (जहाँ स्पेनी सेना गेटा में घेरा डाले पड़ी थी) तब उसने फ़्रांस का साथ देने में आनाकानी करनी शुरू कर दी। उसका उद्देश्य यह था कि इस चाल से वह स्पेनी राज्य से मित्रता कर ले और यदि अलक्ज़ेण्डर जीता रहता तो इस उद्देश्य में वह अवश्य ही सफल-मनोरथ होता। ये सब कार्रवाइयाँ उसने अपने को वर्तमान ख़तरों से बचाने को की थीं। भविष्य के बारे में उसने यह देखा कि सम्भव है कि आगे चलकर जो पोप हो वह उसकी सहायता न करे

और जो कुछ अलेक्ज़ेण्डर ने उसे दिया है वह उससे छीन ले। इस भय से बचने के लिए उसने चार उपाय किये। पहला काम उसने यह किया कि जिन-जिन राजवंशों को उसने निकाल दिया था उनके कुल रिश्तेदारों को उसने मरवा डाला जिससे पोप को उसके विरुद्ध कोई मौक़ा ही न मिले। दूसरी बात उसने यह भी की कि उसने रोमन अमीर-उमराओं से मित्रता कर ली जिससे उनके द्वारा वह पोप को डरा धमका सके। तीसरा उपाय उसने यह किया कि पोप को चुननेवाले कालिज पर उसने भरसक पूरा पूरा अधिकार जमाने की चेष्टा की। चौथे उसने यह किया कि पोप अलेक्ज़ेण्डर के मरने के पहले ही उसने अपने को इतना मज़बूत कर लिया कि पहले आक्रमण को वह अकेला ही बचा सके। अलेक्ज़ेण्डर की मृत्यु के समय उसने इनमें से तीन बातें तो पूरे तौर से कर ली थीं और चौथी भी वह प्रायः कर ही चुका था।

क्योंकि पदच्युत शासकों में से उसे जितने मिल सके, उसने सब को मरवा डाला। बहुत ही कम उससे बच कर भाग सके। उसने रोमन अमीर-उमराओं को अपने पक्ष में कर लिया और कालिज में भी उसके पक्षवाले ही अधिक थे। नये प्रान्तों में अधिकार करने के लिए उसने टस्कनी के लार्ड होने का उद्योग किया, पेरुगिया और पैरम्बिनो के प्रान्त उसके अधिकार में थे ही। पीसा को उसने अपनी संरक्षकता में कर लिया। और जब उसने देखा कि अब फ़्रांस से डरने की आवश्यकता नहीं है तो उसने पीसा पर क़ब्ज़ा भी कर लिया क्योंकि स्पेनियों ने फ़्रांसीसियों को नेपल्स से निकाल

दिया था जिसके कारण ये दोनों ही उसकी मित्रता प्राप्त करने को उत्सुक थे। इसके बाद ही कुछ तो डर से और कुछ फ्लोरेंसवालों की ईर्ष्या से लुक्का और सीना एकदम उसकी शरण में आ गये। फ्लोरेंसवालों के पास धन-जन और शक्ति की कमी थीं इस कारण यदि अलेक्जेण्डर न मर जाता तो उसी साल वह इतना शक्तिशाली और विख्यात हो जाता कि विना किसी दूसरे की सहायता के ही वह अपना सिक्का जमाये रखता। किन्तु उसके युद्ध आरम्भ करने के सिर्फ़ पाँच साल बाद ही अलेक्जेण्डर की मृत्यु हो गई। जिस समय वह मरा उस समय केवल रोमग्ना ही में ड्यूक का पूर्ण शासन था और उसकी बाक़ी सब योजनाएँ हवा में लटक रहीं थीं, वह दो ओर से दो बहुत ही शक्तिशाली शत्रु-सेनाओं से घिरा था और स्वयं एक भयङ्कर रोग से पीड़ित था। किन्तु ड्यूक इतना योग्य और बहादुर था, और उसे दूसरों को अपनी ओर फोड़ने या हराने की विद्या इस तरह मालूम थी कि यदि उस समय उसका स्वास्थ्य अच्छा होता या वे दो शत्रु सेनाएँ वहाँ न होतीं, तो वह कुल आपत्तियों को नष्ट करके सफल हो जाता। उसकी नींव बड़ी दृढ़ थी। इसका प्रमाण यही है कि रोमग्ना उसकी प्रतीक्षा एक महीने से भी अधिक समय तक करता रहा। यद्यपि रोम में वह अधमरा हो रहा था तो भी वहाँ वह निरापद रहा और बैग्लिओने, विटैली तथा औसिंनी के रोम पर अधिकार कर लेने पर भी उन्हें वहाँ ड्यूक के विरुद्ध आदमी नहीं मिले। यद्यपि वह अपने मनचीते व्यक्ति को पोप नहीं बना सका तथापि जिस व्यक्ति

को वह पोप नहीं होने देना चाहता था, उसे उसने नहीं ही होने दिया। किन्तु यदि अलेक्ज़ेण्डर की मृत्यु के समय उसका स्वास्थ्य अच्छा रहता तो वह सब कुछ अपनी इच्छा के अनुसार सरलतापूर्वक कर लेता। जिस दिन पोप जूलियस द्वितीय पोप बनाया गया, उसने मुझसे कहा था कि मैंने अपने पिता (अलेक्ज़ेण्डर) के मरने के समय जो जो बातें होंगी उन सबको अच्छी तरह सोच समझ लिया, किन्तु यदि मुझे कोई बात नहीं मालूम थी तो वह यह थी कि उस समय स्वयं उनके प्राण निकल रहे होंगे। अतएव ड्यूक के कुल कामों की समालोचना करने के बाद मुझे उसमें दोष लगाने की कोई बात नहीं मिलती। मैं उन सब लोगों को उसके कामों की नक़ल करने की सलाह देता हूँ जो भाग्य और दूसरों की सहायता से शक्तिशाली हो बैठे हैं। अपने अपार लोभ और साहस के कारण वह किसी और उपाय का अवलम्बन कर ही नहीं सकता था। और उसकी असफलता का केवल कारण उसके पिता का छोटा जीवन और उसका तत्कालीन रोग ही था।

अतएव जो लोग अपने राज्य में यह चाहते हैं कि हमें शत्रुओं का भय न रह जाय, हमें मित्र मिलें, हम जालसाज़ी या किसी प्रकार भी विजय प्राप्त करें, प्रजा हमसे स्नेह करे और डरे, सिपाही हमारा कहना मानें और हमारा आदर करें, पुरानी रस्मों को दूर कर हम नई बातों का प्रचार करें, और जो कड़े और दयालु या उदार और उदात्त होना चाहें, जो पुरानी सेना को मिटाकर नई सेना संगठित करने की इच्छा करते हों, जो राजाओं-महाराजाओं से इस

प्रकार मित्रता करना चाहें कि वे उनकी सहायता करने में प्रसन्न हों और उनको हानि पहुँचाने में डरें, तो उनको चाहिए कि वे इस व्यक्ति के कामों की नक़ल करें—इससे बढ़कर और कोई आदर्श उनके सामने नहीं रखा जा सकता। उस पर केवल यही दोष लगाया जा सकता है कि उसने जूलियस द्वितीय को पोप चुनने में भूल की क्योंकि यद्यपि वह अपने मन के आदमी को पोप नहीं चुना सकता था तथापि वह जिसे चाहता उसे पोप होने से रोक अवश्य ही सकता था और उसे ऐसे आदमी को कभी भी पोप न बनने देना चाहिए था जिसे उसने पहले कभी हानि पहुँचाई थी या जो पोप होने पर उससे डरा करता। क्योंकि आदमी दूसरों को तभी हानि पहुँचाते हैं जब वे या तो उनसे डरते हैं या घृणा करते हैं।

जिन लोगों को उसने हानि पहुँचाई थी उनमें सैन पैट्रो एंड विन्कुला, कोलोना, सैन जिआर्जिओ और अस्कानिओ थे। रोहन और स्पेनियों को छोड़कर और जो लोग पोप बनाए जाते वे उससे सदा डरा करते। स्पेनी तो कृतज्ञता और सम्बन्ध के कारण उससे न डरते और रोहन स्वयं शक्तिशाली तथा फ़्रांस के राजा का सम्बन्धी न होने के कारण न डरता। इन कारणों से ड्यूक को उचित था कि वह किसी स्पेनी को पोप बनाता और यदि वह इसमें कठिनाई देखता तो उसे उचित था कि वह रोहन को पोप बनाने का उद्योग करता। उसे सैन पैट्रो एंड विन्कुला को तो पोप कभी न बनने देना चाहिए था। जो लोग यह समझते

हैं कि यदि बड़े आदमियों के साथ कोई नया और बड़ा उपकार कर दिया जाय तो वे पुरानी शत्रुता या हानि को भूल जाते हैं, वे बड़ी भूल करते हैं। अतएव ड्यूक ने यह भूल की और इसी से अन्त में उसका नाश हुआ।

आठवाँ अध्याय

जो लोग धूर्तता से राजा बन बैठे हैं, उनके विषय में

किन्तु राजा हो वैठने के दो ऐसे उपाय और भी हैं जिन्हें पूरे तौर से भाग्य या योग्यता नहीं कहा जा सकता है। इनमें से एक का पूरा-पूरा वर्णन प्रजातन्त्र राज्यों का हाल लिखते हुए किया जायगा। एक उपाय तो धूर्तता से राजा वन वैठना है और दूसरा उपाय अपने सहनागरिकों की कृपा से राजा हो जाना है। इनमें से प्रथम उपाय की भलाई-बुराई के वारे में मुझे केवल यही कहना है कि यदि कोई व्यक्ति इन उपायों का अवलम्बन करने को मजबूर हो जाय तो ऐसा करने में कोई बुराई नहीं है। मैं इसका एक प्राचीन और एक नवीन उदाहरण दूँगा। सिसिली निवासी एगेथोकुलीज़ बड़े ही निकृष्ट जीवन से उन्नत होकर साइराक्यूज़ का राजा बन वैठा था। वह एक कुम्हार का लड़का था और उसका सारा जीवन बड़ा ही भ्रष्ट और दुष्टतापूर्ण था। तो भी, उसकी दुष्टता में शारीरिक और मानसिक योग्यता की इतनी अधिक मात्रा थी कि सेना में भर्ती होकर वह साइराक्यूज़ का प्रीटर वन वैठा। प्रीटर होने के वाद उसने वल-पूर्वक राजा होने का इरादा किया। उसने अपना इरादा कार्थेज के हैमिल्कार से ज़ाहिर किया। हैमिल्कार उस समय अपनी सेना लिये हुए

सिसिली में लड़ रहा था। एगेथोकुलीज़ ने एक दिन सवेरे साइरा-क्यूज़ के आदमियों और कुल सिनेट को यह कहकर आमन्त्रित किया कि उसे राज्य के किसी बड़े महत्वपूर्ण प्रश्न पर सलाह करनी है। जब वे सब एकत्रित हो गये तो उसने अपने सिपाहियों को इशारा किया जो एक साथ उन पर टूट पड़े और उन्होंने उन्हें वहीं मार डाला। इस घटना के बाद उसने साइराक्यूज़ में राज्य करना आरम्भ किया और वहाँ कोई आन्तरिक गड़बड़ी नहीं हुई। कार्थेजवालों ने उसे दो बार हराया और एक बार उसे उसी के नगर में घेर भी लिया। किन्तु उसने शहर में थोड़ी सी सेना वहाँ की रक्षा के लिए छोड़कर बची हुई सेना लेकर अफ़्रीक़ा पर चढ़ाई कर दी और थोड़े ही समय में उसने साइराक्यूज़ को छुड़ा लिया तथा कार्थेजवालों को इतना तङ्ग किया कि उन्हें मजबूर होकर उससे सन्धि करनी पड़ी और सिसिली को उसी को सौंप देना पड़ा। अतएव जो व्यक्ति इस आदमी के कामों और गुणों पर विचार करता है उसे मालूम पड़ जाता है कि उसे सौभाग्य से कुछ नहीं मिला क्योंकि उसने वह राज्य किसी की कृपा से नहीं पाया था। किन्तु फ़ौज की हर श्रेणी में रहकर, अनेक कठिनाइयों को उठाकर उसने राज्य प्राप्त किया था और राज्य प्राप्त करने के बाद उसे क़ायम रखने के लिए उसने पचासों भयानक उपाय किये। अपने सह-नागरिकों को मार डालना, अपने मित्रों को धोखा देना, धर्मच्युत हो जाना, और दया को छोड़ देना कभी किसी प्रकार का गुण नहीं समझा जा सकता। इन उपायों से राज्य भले ही मिल जाय

किन्तु ख्याति नहीं प्राप्त हो सकती। यदि एगेथाकुलीज के ख़तरों के सामना करने और कठिनाइयों से घिर जाने पर भी अपने बचाव करने की योग्यता पर कोई विचार करे तो यह कहना पड़ेगा कि वह साहस और योग्यता में किसी सेनापति से कम नहीं था। तो भी उसकी असीम निर्दयता, अमानुषिक कार्रवाइयाँ और अनगिनत अत्याचारों का ध्यान कर उसे सुप्रसिद्ध लोगों की श्रेणी में रखना असम्भव है। न तो वह भाग्यवान् ही था और न सद्गुण-सम्पन्न ही था, और जो कुछ उसने प्राप्त किया उसमें भाग्य या सद्गुण का लेश भी नहीं था। हमारे समय में एलेक्ज़ेण्डर छठवें के राजत्व काल में ऑलिवरेटो डू फ़ूर्मो, जब कि वह बालक ही था, अपने मामा की रक्षा में छोड़ दिया गया था। उसके मामा गिओवानी फ़ार्ग्लिआनी ने उसको पाला-पोसा और जब वह कुछ बड़ा हुआ तो उसे पाओलो वेटिली की अध्यक्षता में लड़ने को भेज दिया जिससे उसे कुछ सैनिक शिक्षा मिल जाय। पाओलो की मृत्यु के बाद वह उसके भाई विटेलोजो के अधीन रहकर लड़ने लगा और चतुर तथा शरीर से चैतन्य होने के कारण वह उसकी एक पल्टन का नायक हो गया। किन्तु उसे दूसरों के अधीन रहना ग़ुलामी मालूम पड़ने लगी और उसने फ़ूर्मो पर अधिकार करने का इरादा किया। इसमें वहाँ के कुछ मूर्ख निवासियों ने—जिन्हें स्वतन्त्रता की अपेक्षा ग़ुलामी अधिक पसन्द थी—और विटेलिस ने उसकी सहायता करने का वादा किया। इस पर उसने अपने मामा गिओवानी फ़ोग्लिआनी को लिखा कि

मुझे घर छोड़े बहुत दिन हो गये हैं और आपको तथा घर देखने के लिए मेरा जी घबड़ा रहा है। और मैं यह दिखलाना चाहता हूँ कि इतने दिनों मैंने अपना समय व्यर्थ ही नहीं गँवाया किन्तु उसमें मैंने सम्मान प्राप्त किया है। इसलिए मैं चाहता हूँ कि मैं एक सौ घुड़सवारों और अपने मित्र तथा साथियों को लेकर आऊँ और आप कृपाकर ऐसा प्रबन्ध कर दें जिससे फ़ुर्मो के निवासी मेरा स्वागत सम्मानपूर्वक करें। इस स्वागत से केवल मेरा ही सम्मान न होगा किन्तु आपका भी सम्मान होगा क्योंकि मैं आप ही का तो शिष्य हूँ। इस पर गिओवानी ने अपने भाञ्जे को सन्तुष्ट करने के लिए यह आज्ञा निकाली कि फ़ूर्मो के लोग उसका भली भाँति स्वागत करें। उसने उसे अपने ही घर में टिकाया। कुछ दिन अपने दुष्ट षड्यन्त्र का प्रबन्ध करके उसने एक दिन गिओवानी फ़ोग्लिआनी और .फ़ूर्मों के मुख्य-मुख्य लोगों को एक बड़ा भोज दिया। भोजन और नाच-तमाशे के बाद आलिवरोटो ने चालाकी से वाद-विवाद के लिए कुछ महत्वपूर्ण विषय उपस्थित कर दिये। वह पोप अलेक्ज़ेण्डर और उसके लड़के सीज़र की बड़ाई करने लगा। जब गिओवानी और उसके दूसरे साथी इसका उत्तर दे चुके तो वह एकाएक उठ बैठा और बोला—इन बातों पर निराले में बहस की जानी चाहिए और यह कहकर वह एक कमरे में चला गया जहाँ उसके पीछे-पीछे गिओ-वानी तथा अन्य लोग भी गये। वे लोग कमरे में अच्छी तरह बैठ भी नहीं पाये थे कि उसके सिपाही अपने छिपे हुए स्थानों से निकल

कर उन पर टूट पड़े और उन्होंने गिओवानी तथा उसके साथियों को वहीं मार डाला। इस हत्या के बाद वह घोड़े पर चढ़कर नगर के मुख्य मजिस्ट्रेट के घर पर पहुँचा और उसने उसे घेर लिया। इस पर डर के मारे लोगों ने उसे अपना राजा स्वीकार कर लिया। जिन लोगों से उसे भय था, वे सब मारे जा चुके थे, सो उसने देशी और फ़ौजी नये क़ायदे बनाकर अपने को मज़बूत कर लिया। एक साल के अन्दर ही उसने फ़ुर्मो को बिल्कुल अपने क़ाबू में कर लिया और पास पड़ोस के लोग उससे डरने लगे। जिस प्रकार एगेथोकुलीज़ को हराना मुश्किल हो गया था, उसी प्रकार इसे भी हराना मुश्किल हो जाता किन्तु सिनिगैग्लिया में, जहाँ उसने ओर्सिनीस और विटैलिस लोगों को घेर रखा था, वह सीजर बोर्जिया के धोखे में आ गया और वहाँ वह पकड़ लिया गया, और अपने मामा की हत्या करने के एक साल बाद ही फाँसी देकर मार डाला गया। उसके साथ ही विटेलोजो भी मारा गया जो कि दुष्टता और योग्यता में उसका सहकारी और गुरु था। कुछ लोग इस बात पर आश्चर्य करेंगे कि एगोथेकुलीज के समान क्रूर और धोखेबाज आदमी किस तरह इतने दिनों अपने राज्य में निःशंक होकर राज्य करते हुए विदेशी शत्रुओं से भी अपनी रक्षा करते रहे। लोग अचरज करेंगे कि उनकी प्रजा ने उनके विरुद्ध षडयन्त्र क्यों नहीं किये। बहुत से लोगों को तो अपनी क्रूरता के कारण शान्ति के समय में ही काम चलाना असम्भव हो जाता है—लड़ाई के समय की तो बात ही निराली है।

मेरी राय में तो यह सब इस बात पर निर्भर है कि क्रूरता का उपयोग अच्छी तरह किया जाता है या बुरी तरह से। क्रूरता का सदुपयोग उस हालत में कहा जा सकता है जब कि मनुष्य अपने उत्थान के लिए क्रूरता करता है और उसके बाद वह प्रजा की भलाई में लग जाता है। वे क्रूरताएँ बुरी हैं जो पहले चाहे कम हों, किन्तु समय पाकर बढ़ती जाती हैं। पहली श्रेणी के लोग ईश्वर और मनुष्य के साथ समय पाकर बहुत कुछ समझौता कर सकते हैं। एगोथोकुलीज़ ने यही किया। किन्तु जो दूसरी श्रेणी के होते हैं, उन्हें अपनी स्थिति को भी बनाये रखना असम्भव हो जाता है। अतएव जेता को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वह कुल क्रूरताएँ एक-दम एक ही बार कर डाले, जिससे उसे बार-बार और हर रोज़ नये अत्याचार न करने पड़ें—किन्तु एक बार कुछ अत्याचार करने के बाद वह ऐसे काम कर सके जिससे प्रजा का लाभ हो और प्रजा के चित्त में एक प्रकार का धीरज बँध जाय, और वह उनकी भलाई कर सके जिससे वे उसके पक्ष में हो जायँ। किन्तु जो लोग हिचकिचाहट या ख़राब सलाह के कारण हमेशा हाथ में छुरी लिये हुए नज़र आते हैं, वे अपनी प्रजा पर कभी भरोसा नहीं कर सकते क्योंकि बराबर क्रूरता सहने के कारण उनकी प्रजा कभी उनपर भरोसा करने का साहस नहीं कर सकती। जो कुछ अत्याचार करने हों, प्रजा का जो नुक़सान करना हो, वह सब एक ही बार में कर डालना चाहिए, जिससे कम समय में किये जाने के कारण प्रजा को उनकी

याद कम रह जाय। और जो भलाइयाँ करनी हों, वे धीरे-धीरे की जायँ, जिससे प्रजा उनका उपयोग अच्छी तरह कर सके। राजा को सबसे अधिक ध्यान इस बात का रखना चाहिए कि वह अपनी प्रजा के साथ ऐसा वर्ताव रखे कि किसी दुर्घटना के कारण उसकी यह इच्छा कभी न हो कि हम अपने राजा को बदल दें। विपत्ति के समय यदि अत्याचार किया जाय तो उस कड़ाई का उलटा परिणाम होता है और यदि उस समय प्रजा के साथ भलाई की जाय तो उससे कोई लाभ नहीं होता क्योंकि लोग समझते हैं कि इस समय इन्हें लाचार होकर प्रजा के हित का काम करना पड़ रहा है। अतएव सलूक करने का कुछ भी प्रेम नहीं रह जाता।

नवाँ अध्याय

नागरिक राज्य के सम्बन्ध में

अब हम ऐसा उदाहरण लेते हैं जहाँ कोई नागरिक अत्याचार या उपद्रव के कारण नहीं किन्तु अपने सहनागरिकों की कृपा से राजा हो जाता है। ऐसे राज्य को नागरिक राज्य कहा जा सकता है। इस उद्देश्य पर पहुँचने के लिए कोरी योग्यता या निरे सौभाग्य की ही आवश्यकता नहीं है। उसके लिए सौभाग्य के साथ-साथ धूर्तता की भी जरूरत है। ऐसा राज्य या तो कुल नागरिकों की कृपा से मिल सकता है या अमीर-उमराओं की इच्छा से। हर एक नगर में ये दो विपरीत दल होते हैं—जनता बड़ों के अत्याचार से बचने और बड़े लोग जनता पर हुकूमत और अत्याचार करने की इच्छा से दलबन्दी कर लेते हैं। इन दो विपरीत स्वार्थों के कारण नगर में या तो स्वेच्छाचारी सरकार हो जाती है, या स्वतन्त्रता हो जाती है, या स्वच्छन्दता का राज्य हो जाता है। स्वेच्छाचारी सरकार का होना इन दोनों दलों की अपेक्षाकृत शक्ति या अवसर पर निर्भर है। जब अमीर-उमरा देखते हैं कि वे जनता को नहीं दबा सकते तब वे अपने में से एक आदमी को राजा बना देते हैं, और उसकी आड़ में अपना काम निकालते हैं। इसके विपरीत जब जनता यह देखती है कि वह अमीर-उमराओं से अपनी रक्षा

नहीं कर सकती तो वह भी किसी को राजा बनाने की फ़िक्र करती है जिससे उसकी शक्ति के द्वारा वह अपनी रक्षा कर सके। जो व्यक्ति अमीरों की सहायता से राजा होता है उसको अपना अधिकार क़ायम रखने में अधिक कठिनता पड़ती है क्योंकि वह ऐसे लोगों से घिरा रहता है जो अपने को उसके बराबर ही समझते हैं और इस कारण वह अपने इच्छानुसार शासन नहीं कर सकता। किन्तु जो लोग जनता की कृपा से राजा हो जाते हैं, उनकी प्रतिद्वन्द्विता करने के लिए कोई नहीं खड़ा होता और यदि ऐसे व्यक्ति हुए भी तो उनकी संख्या बहुत कम होती है। इसके अतिरिक्त अमीरों को न्यायपूर्ण बर्ताव से, बिना किसी को हानि पहुँचाये, प्रसन्न करना असम्भव है। किन्तु प्रजा को इस उपाय से बड़ी सरलता से प्रसन्न किया जा सकता है। इसका कारण यह है कि जनता का उद्देश्य अधिक साधु और अधिक ईमानदारी का होता है—वह अत्याचार से बचने का उद्योग करती है, किन्तु अमीरों का उद्देश्य अत्याचार करना होता है। साथ में यह भी कहना पड़ेगा कि जनता की संख्या इतनी अधिक होती है कि उसे अपना शत्रु बनाकर बचे रहना असम्भव है, किन्तु अमीरों के शत्रु हो जाने से अधिक चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं होती, क्योंकि उनकी संख्या इनी-गिनी ही होती है। जनता अप्रसन्न होने पर अधिक से अधिक यह कर सकती है कि वह अपने राजा का साथ न दे, किन्तु यदि अमीर विरुद्ध हो गये तो वे उसका पूरा-पूरा विरोध करने लग जाते हैं और वे इतने धूर्त होते हैं कि अपने आपको सुरक्षित

रख कर फ़ौरन उस आदमी से मिल जाते हैं जिसके जीतने की सम्भावना होती है। राजा को उसी प्रजा के बीच में हमेशा रहना पड़ता है, किन्तु उसके लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह सदा उन्हीं अमीरों के साथ रहे, क्योंकि वह अमीरों को अपने इच्छानुसार बना या बिगाड़ सकता है। इस विषय को अधिक स्पष्ट करने के लिए मैं यह कहूँगा कि अमीरों को दो भिन्न दृष्टियों से देखना चाहिए। अर्थात् या तो उन पर इस तरह शासन करना चाहिए कि वे अपनी उन्नति को राजा की उन्नति पर निर्भर समझें या अपनी उन्नति को राजा की उन्नति से स्वतन्त्र समझें। जो अमीर तुमसे अपना निकट सम्बन्ध समझते हैं और बहुत लालची नहीं हैं, उनकी इज़्ज़त की जानी चाहिए और उनसे स्नेह दिखलाना चाहिए। और जो लोग दूसरी श्रेणी के हैं उनके दो विभाग कर लेने चाहिए। एक तो वे हैं जो साहस न होने के कारण तुमसे दूर रहते हैं। तुम्हें चाहिए कि ऐसे लोगों का उपयोग करो। विशेष कर उन लोगों को, जो समझदार और मंत्रणा देने में कुशल हैं, सन्तुष्ट रखो। इससे वे समृद्धि के समय तुम्हारा आदर करेंगे और यदि तुम पर कोई विपत्ति आई तो वे तुम्हें कोई हानि भी नहीं पहुँचावेंगे। किन्तु जो अमीर तुम पर निर्भर नहीं हैं, और जिनकी अभिलाषाएँ महान् हैं, वे अपने को तुमसे अधिक समझते हैं। राजा को चाहिए कि ऐसे आदमियों से सावधान रहे और उन्हें अपना गुप्तशत्रु समझे क्योंकि तुम्हारे ऊपर विपत्ति आते ही ये लोग तुम्हें नष्ट कर डालने में कोई कसर उठा न

रखेंगे। किन्तु जो व्यक्ति जनता की कृपा से राजा हो जाता है उसे चाहिए कि वह जनता की मित्रता का बन्धन ढीला न होने दे। जनता की मित्रता का क़ायम रखना वहुत सहल है क्योंकि वह केवल यही चाहती है कि उस पर अत्याचार न किया जाय। किन्तु जो अमीरों की कृपा से जनता की इच्छा के विरुद्ध राजा हो जाता है उसे सबसे पहले यह चाहिए कि वह जनता को प्रसन्न कर ले, और यदि वह जनता की रक्षा करने लगे तो उसे प्रसन्न कर लेना वहुत सहल है। जिस व्यक्ति से हम बुराई की आशा करते हैं, यदि उससे हमारी भलाई हो तो हम उसके वहुत कृतज्ञ हो जाते हैं। उसी प्रकार यदि यह राजा अपनी नई प्रजा की भलाई करने लगे तो प्रजा उससे और भी अधिक स्नेह करने लगेगी। राजा नाना प्रकार से राज्य की अवस्था के अनुसार प्रजा का हित करके उसको प्रसन्न कर सकता है। उसके लिए कोई नियम नहीं बनाये जा सकते। इस कारण उसका ज़िक्र अनावश्यक है।

मैं केवल इतना ही कहूँगा कि यदि राजा ने प्रजा को अपना मित्र नहीं बनाया तो विपत्ति के समय उसका कोई सहायक न होगा। स्पार्टा के राजा नैविस को सारे ग्रीस और एक शक्तिशाली रोमन सेना ने घेर लिया था, किन्तु उसने अपने देश की रक्षा की और अपना पद क़ायम रखा। जब उस पर विपत्ति आई तब उसने कुछ लोगों की सहायता का विश्वास कर लिया, किन्तु यदि जनता उसके विरुद्ध होती तो उसकी रक्षा असम्भव थी। सम्भव है, कुछ लोग मेरे विरुद्ध यह कहावत

पेश करें कि जो लोग जनता पर विश्वास करते हैं वे दलदल पर घर बनाते हैं। यह कहावत उस समय के लिए है जब कोई साधारण व्यक्ति यह विश्वास कर लेता है कि जनता को प्रसन्न कर लेने पर मैं अपने शत्रुओं या सरकारी अत्याचार से बच सकता हूँ। इस अवस्था में पड़ जाने पर उस आदमी को धोखा हो जाने की सम्भावना रहती है, जैसे रोम में ग्रेची और फ्लोरेंस में मैसर जिओर्जिओ स्केली को धोखा हुआ था।

किन्तु जब कोई साहसी तथा विपत्ति में धैर्य और जनता में जोश पैदा करने की योग्यता रखनेवाला राजा (जिसने दूसरी तैयारियाँ भी की हैं) अपने को इस नींव पर खड़ा करता है तो उसे मालूम होता है कि मैंने अपना भवन दृढ़ बुनियाद पर खड़ा किया है। उसे लोग धोखा न देंगे। साधारणतया ऐसे राजा उस समय खतरों में पड़ जाते हैं, जब वे नागरिक राजा के ढंग छोड़कर निरङ्कुश हो जाते हैं। राजा लोग या तो स्वयं, या मैजिस्ट्रेटों के द्वारा शासन करते हैं। जो नागरिक राजा मैजिस्ट्रेटों के द्वारा शासन करता है वह अधिक खतरे में रहता है, क्योंकि उसकी मान-मर्यादा इन लोगों के हाथ में रहती है और विपत्ति के समय वे उसके हुक्म की परवाह न करके अथवा उसके विरुद्ध कार्रवाई करके उसे हानि पहुँचा सकते हैं। उस समय वह राजा अपने पूर्ण अधिकार का उपयोग नहीं कर सकता क्योंकि प्रजा तो मैजिस्ट्रेटों के द्वारा आज्ञा पाने की आदी हो गई है। अतएव विपत्ति के समय उसके पास विश्वासपात्र आदमियों की कमी पड़ जाती है। ऐसे राजा को

चाहिए कि वह शान्ति के समय की अवस्था पर विश्वास न करे। उस समय उसके आसपास का प्रत्येक व्यक्ति उससे यही कहेगा कि मैं आपके लिए मरने को तैयार हूँ। किन्तु शांति के समय मौत दूर होती है। और जब विपत्ति के समय सहायकों की आवश्यकता होती है तब ये लोग खिसक जाते हैं। राजा को यह अनुभव केवल एक ही बार होता है, इस कारण यह और भी अधिक खतरनाक है। अतएव बुद्धिमान् राजा को चाहिए कि वह ऐसा काम करे कि उसकी प्रजा को सदा उसकी आवश्यकता बनी रहे। और तभी वह सदा राजभक्त बनी रहेगी।

दसवाँ अध्याय

कुल राज्यों की शक्ति की जाँच किस तरह की जानी चाहिए ?

इन राज्यों की अवस्था जानने के लिए एक और बात पर विचार करना आवश्यक है—अर्थात् उनका राजा अपनी रक्षा अपने आप कर सकता है अथवा उसे दूसरों की सहायता की दरकार है। मेरा आशय यह है कि वही राजा अपना पद और अधिकार बनाये रख सकता है जिसके पास धन और जन की बहुतायत है और जो इनकी सहायता से मैदान में बड़े से बड़े दुश्मन का सामना करने को तैयार रहता है। जो राजा हमला होने पर शहर के फाटक बन्द करके अपनी रक्षा करने लगते हैं, उन राजाओं को मैं दूसरों की सहायता का भिखारी समझता हूँ। इसमें से पहली श्रेणी के राजाओं का हाल तो हम बतला ही चुके हैं, और आगे भी जब आवश्यकता होगी तब उनका जिक्र करेंगे। दूसरी श्रेणी के राजा से केवल यही कहना पर्याप्त है कि तुम अपनी क़िलेबन्दी अच्छी तरह तैयार रखो और देश के दूसरे हिस्सों की चिंता छोड़ दो। जिस राजा ने अपनी राजधानी में मज़बूत क़िलेबन्दी कर ली है, और जिसने अपनी प्रजा को अपने बस में कर लिया है, उस पर हमला करने की हिम्मत लोगों

को एकाएक नहीं होगी क्योंकि बहुधा लोग ऐसे काम करने को तैयार नहीं होते जिनमें उन्हें अधिक कठिनाइयाँ प्रतीत होती हैं। जर्मनी के नगर बहुत उदार हैं, उनके आसपास बहुत आराज़ी नहीं है और वे जब मन में आता है तब सम्राट् की आज्ञा मानते हैं और जब इच्छा नहीं होती तो किसी भी बादशाह की परवाह नहीं करते। इसका कारण यह है कि इन नगरों की क़िलेबन्दी बहुत मजबूत है, उनके चारों ओर खाईं और बुर्ज हैं, उनके पास काफ़ी तोपें हैं और वे अपने यहाँ एक साल के लायक़ अन्न-पानी सदा जमा रखते हैं। अतएव लोग जानते हैं कि उनको जीतना बड़ा कष्ट-साध्य है। इसके सिवाय निम्नश्रेणी के लोगों को सन्तुष्ट रखने के लिए वे साल भर तक उन्हें काम दे सकते हैं। वे सैनिक कामों और कसरतों को उत्साहित करते हैं और उनको जारी रखने के लिए उन्होंने बहुत से नियम भी बना रखे हैं। अतएव जिस राजा के पास एक मजबूत नगर है और उसने अपनी प्रजा को अपना शत्रु नहीं बना लिया है, उस पर हमला नहीं किया जा सकता, और यदि कोई उस पर हमला करने का साहस भी करे तो उसे लज्जित होकर वापस जाना पड़ेगा क्योंकि एक साल तक चुपचाप फ़ौज लिये पड़े रहना सम्भव नहीं है। कुछ लोग शायद यह कहें कि जब नगर में घिरी हुई प्रजा यह देखेगी कि शत्रु उसके नगर के बाहर की जायदाद को जलाये दे रहे हैं, तो उसका धीरज छूट जायगा और वे लोग अपने स्वार्थों के कारण अपने राजा की परवाह न करेंगे। किन्तु इसके उत्तर में मैं यह कहूँगा

कि यदि वह राजा दृढ़ और साहसी हुआ तो वह अपनी प्रजा की हिम्मत बढ़ाता रहेगा, वह उसे समझावेगा कि ये अत्याचार सदा बने नहीं रह सकते, वह अपनी भयभीत प्रजा को बतलावेगा कि यह शत्रु कितना क्रूर और अत्याचारी है, और साहसी लोगों को अपनी ओर मिला लेगा। इसके सिवाय, शत्रु तो आते ही नगर के बाहर की जायदाद जला देगा और नष्ट कर देगा और जब नुकसान हो चुकेगा तब प्रजा और भी अधिक दृढ़ता से अपने राजा का पक्ष करने लगेगी क्योंकि अब उसको अपनी हानि का मुआवजा पाने का केवल एक ही उपाय है और वह यह कि उसका राजा जीत जाय और जीत जाने पर उसकी क्षति पूर्ण करे।

मनुष्य की यह प्रकृति है कि वह अपने लाभ पहुँचानेवाले से भी उतना ही स्नेह करता है जितना कि वह उससे स्नेह करता है जिसे वह स्वयं लाभ पहुँचाता है। अतएव इस बात का ध्यान रखकर बुद्धिमान् राजा नगर घिरने के आरम्भ में और घेरे के समय भी अपनी प्रजा को अपने वश में रख सकता है—यदि उसके पास रक्षा के साधन हों।

ग्यारहवाँ अध्याय

धार्मिक राज्यों के विषय में

अब हमें धार्मिक राज्यों के बारे में कुछ कहना है। इनके मिलने ही में कठिनता होती है—जहाँ ये एक बार हाथ में आये फिर कोई खटका नहीं रह जाता। उनके मिलने के लिए योग्यता या सौभाग्य की आवश्यकता है किन्तु उनको अधिकार में रखने के लिए इन दो गुणों में से एक की भी आवश्यकता नहीं है क्योंकि वे परम्परा से चली आनेवाली रस्मों के ऊपर स्थित होती हैं और उन पर राज्य करनेवाला चाहे जितना अयोग्य क्यों न हो, बराबर बना रहता है। इन लोगों के पास ऐसा राज्य होता है जिसकी रक्षा करने की आवश्यकता नहीं। इनके पास प्रजा होती है जिसका शासन नहीं करना होता; और चूँकि वे राज्य की रक्षा नहीं करते, इसलिए उनसे कोई राज्य छीन नहीं सकता और शासित न होने के कारण प्रजा कभी उनके विरुद्ध नहीं होती और न उनसे अलग ही हो सकती है। अतएव यही केवल एक ऐसे राज्य हैं जो वास्तव में सुरक्षित और सुखी हैं, किन्तु इनकी रक्षा दैवी शक्ति से होती है, इसलिए मैं उनके बारे में कुछ कहने-सुनने का साहस न करूँगा क्योंकि ईश्वर के मामले में दखल देना मूर्खों का काम है।

तो भी सम्भव है कि कुछ लोग मुझसे यह पूछ वैठें कि "यह तो वतलाओ कि रोम के पोप का राज्य इतना कैसे वढ़ गया? अलेक्ज़ेण्डर छठवें के पहले इटली के वड़े-वड़े राजाओं की तो वात ही क्या, छोटे छोटे ज़मींदार भी उसकी राजकीय शक्ति की कुछ भी परवाह नहीं करते थे। किन्तु अव फ़्रांस का राजा उससे डरता है, उसे उसने (पोप ने) इटली से निकाल भगाया और उसने वीनिस के लोगों को तवाह कर दिया है।" यद्यपि इन वातों को लोग जानते हैं तो भी इस विपय में मेरा कुछ कहना असंगत नहीं होगा। इटली पर फ़्रांस के राजा की चढ़ाई के पहले इस देश (इटली) में पोप, वीनिस, नेपल्स के राजा, मिलन के ड्यूक और फ़्लोरेंसवालों का राज्य था। इन लोगों को दो खास चिन्ताएँ थीं। एक तो यह कि कोई विदेशी शक्ति जवर्दस्ती इटली में न घुस आवे और दूसरी यह कि वर्तमान शक्तियों में से कोई भी अपना राज्य न वढ़ावे। इनमें पोप और वीनिसवालों पर विशेष प्रकार से कड़ी निगाह रखने की आवश्यकता थी। यदि वीनिसवालों को दवाने का प्रयत्न किया जाता तो उसका परिणाम यह होता कि दूसरी सारी शक्तियाँ नष्ट हो जातीं क्योंकि फ़रारा के वचाव के समय इस वात का अनुभव हो चुका था। और पोप को दवा रखने के लिए उन्होंने रोमन सरदारों का उपयोग किया। रोमन सरदारों के दो दल थे। पहले दल का नाम था ओर्सिनीस और दूसरे का कोलोनस। ये दोनों आपस में झगड़ते थे और सदा लड़ने को तैयार रहते थे

और पोप के सामने रहने के कारण इन्होंने पोप को कमज़ोर कर दिया था। जब कभी सैक्सटस के समान एक आध दृढ़ पोप पैदा हो जाता था किन्तु इन कठिनाइयों से वह छुटकारा नहीं पा सका। इसका मुख्य कारण यह है कि वृद्ध होने ही पर लोग पोप के पद पर चुने जाते हैं और पोप पद पर वे औसत पर दस साल रहते हैं। इस थोड़े से समय में यदि उन्होंने दो दलों में से एक को दबा भी पाया तो उसके बाद जो पोप हुआ वह शायद दूसरे दल का दुश्मन निकला। अतएव वह पहले दल पर कृपा करने लगा और जो निर्बल हो गया था वह फिर सबल बन बैठा। इस कारण वे सदा कमज़ोर बने रहते थे और इटली में लोग उनकी राजनैतिक शक्ति की परवाह नहीं करते थे।

इसके बाद छठवाँ अलेक्ज़ेण्डर पोप हुआ। इसकी तरह किसी पोप ने यह नहीं दिखलाया था कि शक्ति और धन का किस तरह उपयोग करना होता है। फ्रांसीसी हमले के समय ड्यूक वैलेण्टाइन की सहायता से, जो उसके हाथ की कठपुतली था, उसने वे सब कार्रवाइयाँ कीं जिनका हाल मैं ड्यूक का हाल बतलाते समय कह चुका हूँ। और यद्यपि उसका तत्कालीन उद्देश्य चर्च की सम्पत्ति बढ़ाने का न था, किन्तु ड्यूक की सहायता करना था; तथापि ड्यूक के मरने के बाद वह सब सम्पत्ति चर्च ही को मिली। इसके बाद पोप जूलियस हुआ। उसने देखा कि चर्च शक्तिवान् है, सारा रोमग्ना उसके कब्ज़े में है, कुल रोमन सरदार नष्ट हो चुके हैं और अलेक्ज़ेण्डर की कड़ाई के कारण सारी

दलबन्दियाँ टूट चुकी हैं। अतएव उसको धन एकत्रित करने के वे साधन मिले जो अलेक्ज़ेण्डर ने ईजाद किये थे। उसने उन साधनों का केवल उपयोग ही नहीं किया किन्तु उसने बोलोग्ना पर अधिकार करने, वीनिसवालों को दबाने और फ्रांसीसियों को इटली से निकाल बाहर करने का निश्चय कर लिया। इन सब बातों में उसे सफलता हुई। उसकी प्रशंसा और अधिक करनी चाहिए क्योंकि उसने यह सब कार्रवाइयाँ किसी व्यक्ति-विशेष के लाभ के लिए नहीं की थीं किन्तु उसका एक मात्र उद्देश्य चर्च की सम्पत्ति और शक्ति बढ़ाना था। उसने ओर्सिनी और कलोनोस लोगों को सिर नहीं उठाने दिया। इन दलों में कुछ ऐसे लोग अवश्य थे जो उलटफ़ेर कर सकते थे किन्तु उनके चुप रहने के दो कारण थे। एक तो वे चर्च की महत्ता से डरते थे, दूसरे उनमें से कोई कार्डिनल नहीं था जो झंझटों की जड़ बन जाता। क्योंकि यदि इनमें से कोई कार्डिनल होता तो वह रोम के अन्दर और बाहर दलबन्दी पैदा कर देता और तब ये सरदार उसकी रक्षा करने को लाचार हो जाते। इस प्रकार के महन्तों के लोभ और लालच से सरदारों में झगड़े और खून-ख़राबियाँ पैदा होती हैं। अतएव पोप लिओ दसवें को (अर्थात् मेकिआवली के समय के पोप को) चर्च बड़ी ही समृद्ध और शक्तिशाली दशा में मिला है। और आशा है कि जिस प्रकार अन्य पोपों ने उसे सेनाओं के ज़ोर से महान् बनाया था उसी प्रकार ये उसे अपने सद्गुणों के कारण केवल महान् ही नहीं किन्तु श्रद्धेय भी बनायेंगे।

बारहवाँ अध्याय

भिन्न भिन्न प्रकार की सेनाएँ और भाड़ैतू सिपाही

मैं जिन राज्यों का हाल बतलाना चाहता था उनकी अवस्था दिखला चुका हूँ। मैं उनकी उन्नति और अवनति के थोड़े-बहुत कारण भी बतला चुका हूँ और इस बात का भी जिक्र कर चुका हूँ कि लोगों ने किन-किन उपायों से राज्यों को हासिल किया है। अब मैं यह बतलाना चाहता हूँ कि इन राज्यों में आक्रमण और रक्षा करने के कौन कौन से उपाय किये जा सकते हैं। मैंने यह बतलाया है कि यदि राजा अपने राज्य की सुदृढ़ नींव नहीं डालता तो वह अवश्य ही नष्ट हो जाता है। सब राज्यों की बुनियाद अच्छे कानून और अच्छी सैनिक-शक्ति पर निर्भर है। और जहाँ की सैनिक-शक्ति अच्छी नहीं है वहाँ के कानून भी अच्छे नहीं हो सकते और जहाँ की सैनिक शक्ति अच्छी है वहाँ के कानून भी अच्छे होंगे। अतएव मैं इस समय कानूनों पर विचार न करके सैनिक-शक्ति पर विचार करूँगा। राजा या तो अपनी सेना रखता है, या उसके पास भाड़ैतू सिपाही रहते हैं, या उसके पास विदेशी सहायक सेना होती है या इनका मिश्रण होता है। विदेशी सहायक सेना और भाड़ैतू सिपाही निकम्मे और भयङ्कर होते हैं और यदि कोई राजा अपना राज्य भाड़ैतू सिपाहियों के बल पर

चलाना चाहता है तो वह कभी भी सफल नहीं होगा क्योंकि ये सिपाही लालची, शासनहीन, छली, मित्रों के सामने वीर और शत्रुओं के सामने कायर होते हैं। उनमें एका नहीं होता। उन्हें न तो ईश्वर का डर ही होता और न मनुष्य में विश्वास होता है। ऐसे सिपाहियों के वल पर अवस्थित राज्य पर जब तक आक्रमण नहीं किया जाता तभी तक उस राज्य का नाश रुका रहता है। शान्ति के समय ये तुम्हें नोचते-खसोटते हैं और युद्ध के समय तुम्हारा शत्रु तुम्हें लूटता है। इसका कारण यह है कि उन्हें तुमसे किसी प्रकार का प्रेम या कोई दूसरा सम्वन्ध तो है नहीं। वे केवल थोड़े से वेतन के लिए युद्ध के मैदान में जाते हैं, किन्तु वह वेतन इतना नहीं होता कि उसके कारण वे तुम्हारे लिए अपनी जान देदें। जव तक युद्ध नहीं होता तव तक वे खुशी-खुशी तुम्हारे सिपाही वने रहेंगे। किन्तु जैसे ही युद्ध आरम्भ होता है वैसे ही वे या तो भाग जाते हैं या सामना करने लगते हैं। इस वात को साबित करने में मुझे कुछ भी कठिनाई नहीं होगी, क्योंकि इटली की वर्तमान दुरवस्था का मुख्य कारण यही है कि हम इतने दिनों से इन भाड़ैतू सिपाहियों पर भरोसा कर रहे हैं। किसी किसी जगह ये कुछ सुधरे हुए मालूम होते थे और आपस में लड़ते समय कहीं कहीं थोड़ा वहुत वल भी दिखलाते थे, किन्तु जव कभी इन्हें विदेशी सेना का सामना करना पड़ा तभी इनका निकम्मापन स्पष्ट रूप से प्रमाणित हो गया। अतएव इन्हीं के कारण फ्रांस के राजा चार्ल्स को इटली पर अधिकार कर लेने में तनिक

भी कठिनाई नहीं हुई। लोग कहते थे कि इसका कारण हमारा पाप है—वे ठीक कहते थे। किन्तु वह पाप यही भाड़ैतू सिपाही हैं। इनके रखने में राजाओं ने पाप किया था, सो उन्हें भी उसका फल मिला है। भाड़ैतू सेनाओं की बुराइयों को मैं और अच्छी तरह से समझाऊँगा। इनके कप्तान या तो बहुत योग्य या बिल्कुल ही अयोग्य होते हैं। यदि ये योग्य हुए तो स्वयं बढ़ने की कोशिश करेंगे और इसके लिए तुम्हें—अपने स्वामी को—सतावेंगे या दूसरों को तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध सतावेंगे। इसलिए तुम उन पर निर्भर नहीं रह सकते। और यदि उनका कप्तान अयोग्य हुआ तो तुम्हारा नाश वैसे ही कर देगा। इस पर शायद कोई यह कहे कि सब सेनाओं में ये खतरे हैं तो मैं उत्तर में कहूँगा कि सेनाओं का उपयोग या तो कोई राजा करता है या कोई प्रजासत्ताक राज्य करता है। यदि सेना राजा के उपयोग के लिए हो तो राजा को चाहिए कि वह स्वयं कप्तान का काम करे और यदि सेना प्रजा-सत्ताक राज्य की है तो वह अपने नागरिक को उनका नायक बनावे। यदि एक नागरिक अयोग्य मालूम हो तो तुरन्त दूसरा नागरिक नायक बना के भेज दिया जाय। और यदि वह योग्य प्रमाणित हो तो उसे कानून की मर्यादा के बाहर जाने का अवसर न मिलने पावे। अनुभव से यह बात देखी गई है कि केवल राजे या बलवान् सेनावाले प्रजासत्ताक राज्य ही उन्नति कर सकते हैं और जहाँ जहाँ भाड़ैतू सेना होती है वहाँ सिवाय हानि के लाभ नहीं होता। साथ में यह भी देखा गया है कि

जिस प्रजातन्त्र में विदेशी सेना होती है उसके नागरिक अपने सह-नागरिकों के शासन को सरलता से स्वीकार कर लेते हैं। किन्तु जिन प्रजातन्त्रों में नागरिक सेना होती है वहाँ किसी नागरिक का राजा बन बैठना बहुत कठिन है। रोम और स्पार्टा की सेनाएँ सदियों तक शक्तिशाली बनी रहीं। इसका परिणाम यह हुआ कि ये दोनों लगातार शताब्दियों तक स्वतन्त्र बने रहे। स्विटज़रलेंड के निवासी सेना से भली भाँति सुसज्जित हैं और इस कारण बहुत सी स्वतन्त्रता उपभोग कर रहे हैं। प्राचीन समय में भाड़ैतू सेना रखनेवालों का उदाहरण कार्थेज है। जिस समय रोम से उसका पहला युद्ध समाप्त हो गया उस समय कार्थेज की भाड़ैतू सेना में वहीं के नागरिक कप्तान थे। फिर भी इस भाड़ैतू सेना ने कार्थेजवालों को लूटने और सताने में कमी नहीं की। इपामनोडस की मृत्यु के बाद थीबन लोगों ने मैसेडन के फिलिप को अपनी सेना का कप्तान बना दिया। जब वह युद्ध में विजयी हो गया तो उसने थीबन लोगों की स्वतन्त्रता छीन ली। मिलनवालों ने अपने ड्यूक फिलिप की मृत्यु के बाद वीनिसवालों से लड़ने के लिए फ्रांसिस्को स्फोर्जा को भाड़े पर रख लिया। स्फोर्जा ने वीनिसवालों को करावेगिओं में हरा दिया किन्तु इसके बाद वह उनसे मिल गया और अपने स्वामी अर्थात् मिलनवालों पर अत्याचार करने लगा। इस स्फोर्जा का पिता नेपल्स की रानी गिओवाना के यहाँ नौकर था। वह वहाँ से सहसा उस बेचारी रानी को निराश और असहाय छोड़कर चल दिया। इस रानी को अपने राज्य की

रक्षा करने के लिए लाचार होकर अरागान के राजा की शरण लेनी पड़ी। कुछ लोग शायद इस पर यह कहें कि वीनिस और फ्लोरैंस के लोगों ने पिछले समय में भाड़ैतू सेना की सहायता से अपने राज्यों का विस्तार किया है तो इस पर मेरा कहना यह है कि इस मामले में फ्लोरैंसवाले भाग्यशाली रहे—क्योंकि उनके उन विजेताओं ने, जिनसे भय किया जा सकता था, कुछ ने विजय नहीं प्राप्त की। कुछ का विरोध किया गया और बचे हुए नायकों ने अपना ध्यान दूसरी ओर फेर दिया था। जिस नायक ने विजय नहीं की वह सर जान हाकउड था। उसकी सच्चाई की परीक्षा इस कारण नहीं हो सकी कि वह जीत नहीं सका। किन्तु यह मानना पड़ेगा कि यदि वह जीत गया होता तो फ्लोरैंसवाले उसके वस में थे। वैक्शियो सदा स्फोर्जा के विरुद्ध रहा और दोनों में दुश्मनी बनी रही। फ्रांसिस्को ने लम्बार्डी के ऊपर अपना दाँत लगाया था, वैक्शियो ने चर्च और नेपल्स के राज्य पर अपनी नजर गड़ाई थी। किन्तु हमें देखना चाहिए कि अभी हाल में क्या हुआ है। फ्लोरैंसवालों ने पाओलो विटेली को अपना कप्तान बनाया। यह व्यक्ति साधारण अवस्था से अपनी बुद्धिमत्ता के कारण उच्च पद पर पहुँचा था। यदि वह पीसा पर अधिकार कर लेता तो फ्लोरैंसवाले उसको अपना मित्र बनाये रखने के लिए लाचार हो जाते क्योंकि यदि वह उनके शत्रुओं से मिल जाता तो फिर उनके लिए उसका सामना करना असम्भव था और उन्हें उसे अपना मित्र बनाये रखने के लिए उसकी आज्ञा

पालन करनी पड़ती। अब वीनिसवालों के इतिहास पर दृष्टि डालने से पता लगता है कि जब तक ये लोग अपनी निज की सेना से काम लेते रहे तब तक वे लोग सम्मानपूर्वक विजय प्राप्त करते रहे। स्थल-युद्ध करने के पहले ये लोग अपने नागरिकों की सेना बनाकर ही लड़ते थे। किन्तु जब इन्होंने स्थल-युद्ध करना आरम्भ किया तो वे उन सद्‌गुणों को छोड़ बैठे और दूसरे इटालियन राज्यों का अनुकरण करने लगे। आरम्भ में उनका राज्य थोड़ा था इसलिए उन्हें अपने कप्तानों से डरने का कोई अधिक कारण भी नहीं था। उस समय उनके नाम का आतंक भी बहुत था। किन्तु जब कार्मग्रोला के समय में उनका राज्य बढ़ गया तो उन्हें अपनी भूल का नतीजा दिखलाई पड़ने लगा। उन्हें यह दिखलाई पड़ने लगा कि वह मिलन के ड्यूक को हराने के कारण बहुत शक्तिशाली हो गया है और चूँकि वह लड़ाई में बहुत उत्साही नहीं है इस कारण उसके द्वारा अधिक विजय प्राप्त करने की आशा नहीं की जा सकती। किन्तु वे उसको निकाल देने का साहस नहीं कर सकते थे क्योंकि उन्हें इस बात का भय था कि उसके निकालने से कहीं वह राज्य भी हाथ से न निकल जाय जिसे उन्होंने उसकी सहायता से प्राप्त किया था। अतएव उससे बचने के लिए उन्हें उसे मार डालना पड़ा। उस समय उनके यहाँ बर्गामों, सेवेरीनो, पिटिग्लिआनो आदि की तरह के सेना-नायक थे—जिनसे सिवाय हानि के लाभ नहीं हो सकता था। और वैला की लड़ाई में हुआ भी यही। वहाँ उन्होंने उस वस्तु को एक दिन में खो दिया

जिसे उन्होंने आठ सौ वर्षों में बड़े परिश्रम से प्राप्त कर पाया था। इसका कारण यह था कि इन भाड़ैतू सेनाओं के द्वारा धीरे-धीरे और बहुत छोटे लाभ हो सकते हैं किन्तु इनसे जो हानि होती है वह बहुत भयंकर होती है और बहुत ही थोड़े समय में हो जाती है। मैंने ये उदाहरण इटली ही से दिये हैं क्योंकि इस देश में बहुत दिनों से भाड़ैतू सेना ही के द्वारा शासन किया जाता है। अब मैं उनके बारे में कुछ और बातें बतलाऊँगा जिससे उनका इतिहास जानकर इस अवस्था में सुधार किया जा सके। तुम्हें यह भली भाँति समझ लेना चाहिए कि जिस समय रोमन साम्राज्य का अधःपतन होने लगा और राजनैतिक मामलों में पोप का प्रभाव बढ़ने लगा, उस समय इटली बहुत से छोटे-छोटे राज्यों में विभक्त था। बहुत से मुख्य-मुख्य नगरों में वहाँ के अमीरों ने सम्राट् के इशारे से अधिकार कर लिया था और वे उन पर अत्याचार कर रहे थे। किन्तु जब साम्राज्य का अधःपतन होने लगा तो ये नगर इन सरदारों के विरुद्ध बलवा करने लगे और पोप ने इन नगरों को इस काम में उत्साहित किया क्योंकि इससे उसके राजनैतिक प्रभाव की वृद्धि होती थी। बाज़-बाज़ शहरों में स्थानीय नागरिक ही राजा बन बैठे। इस प्रकार इटली चर्च (पोप) और कुछ थोड़े से प्रजातन्त्र राज्यों के हाथ में पड़ गई। ये पादरी और अधिकांश नागरिक युद्धविद्या तो जानते नहीं थे, इसलिए ये लोग विदेशी सैनिकों को नौकर रखने लगे। इस प्रकार की भाड़ैतू सेना का नाम करनेवाला सबसे पहला रोमग्ना का निवासी एल

वरीगी डा कोमो था। इसके सैनिक-शासन के कारण स्फ़ोर्जा और वैक्शियो उत्पन्न हुए जो अपने समय में इटली के हर्ता, कर्त्ता, धर्ता और विधाता थे। इनके बाद अन्य भाड़ैतू सेनानायक हुए जो अब तक इटली की सेनाओं के अधिपति हैं। इन्हीं के कारण चार्ल्स ने इटली को एक सिरे से दूसरे सिरे तक नेस्तनाबूद कर दिया। इन्हीं के कारण लुई ने इटली पर शिकार की तरह दाँत लगाया। इन्हीं के कारण उस पर फ़ेरैण्डो ने अत्याचार किया और इन्हीं के कारण स्विस लोगों ने इटली का अपमान किया है। इन लोगों की नीति यह रही है कि पहले तो इन्होंने अपनी ख्याति करके पैदल सेना को बदनाम कर दिया। इसका कारण यह था कि इनका कोई देश तो था ही नहीं, ये जो पैदा करते हैं वही खाते हैं, इसलिए वे बहुत से पैदल सिपाही तो रख नहीं सकते और थोड़े से पैदल सिपाहियों से उनको लाभ नहीं होता। अतएव उन्होंने घुड़सवार सेना ही रखने का नियम कर लिया। इस कारण थोड़े से होने पर भी उनकी खूब ख़ातिर होती और उन्हें काफ़ी वेतन मिलता है। पैदल सेना को उन्होंने इतना गिराया कि २०००० आदमियों की सेना में २००० पैदल भी नहीं होते थे। यह लोग लड़ाई के समय में भरसक किसी की जान नहीं लेते थे (क्योंकि दोनों पक्षों में भाड़ैतू सेना ही तो रहती थी) और बिना हथियार चलाये विपक्ष के लोगों को क़ैद कर लिया करते थे। वे रात्रि में क़िलों पर हमला नहीं करते थे और जो भाड़ैतू सिपाही क़िले में होते वे रात्रि में बाहर-विपक्षी सेना के तम्बुओं पर छापा नहीं

मारते थे। जाड़े में वे लड़ाई में नहीं जाते थे। उनके सैनिक नियमों में ये सब बातें आवश्यक थीं और इसका कारण यह था कि वे खतरे और तकलीफ़ से बचना चाहते थे। इसका परिणाम यह है कि आज इटली पतित हो गई है और दासता की शृङ्खला में जकड़ी हुई है।

तेरहवाँ अध्याय

विदेशी सहायक, मिश्रित और देशी सेना के विषय में

विदेशी सहायक सेना निकम्मी होती है। जब कोई राजा अपनी सेना से घबड़ा उठता है तब वह किसी दूसरे राजा से सहायता के लिए सेना माँगता है। हाल ही में जूलियस ने फ़रारा पर चढ़ाई करते समय अपनी भाड़ैतू सेनाओं से ऊबकर स्पेन के राजा फर्जेण्डो से उसकी सेना अपनी सहायता के लिए मँगाई थी। लड़ने-भिड़ने में ये सेनाएँ चाहे कितनी ही अच्छी क्यों न हों किन्तु मँगानेवाले के लिए ये कभी लाभदायक नहीं होतीं क्योंकि यदि वे हार गईं तो तुम्हारा सर्वनाश हो गया और यदि वे जीत गईं तो तुम उनके हाथ बन्दी हो गये। प्राचीन इतिहास में ऐसी घटनाओं के अनेकों प्रमाण मिलेंगे किन्तु मैं पोप जूलियस द्वितीयवाला उदाहरण दूँगा जो अभी हाल ही का है। जो कार्रवाई उसने की, वह बिल्कुल मूर्खतापूर्ण थी क्योंकि उसने फरारा को हथियाने के लोभ से अपने आपको विदेशी शक्ति के एकदम हवाले कर दिया। किन्तु सौभाग्य से उनके बीच में एक ऐसा तीसरा कारण उदय हो गया जिससे उसे अपनी मूर्खता का पूरा-पूरा फल नहीं मिल पाया। वह घटना यों हुई कि जैसे ही रैवना में उसकी सहायक सेना हारी वैसे ही स्विटज़रलैण्ड के निवासियों ने उठकर

उसके विजयी शत्रुओं को हरा दिया और पोप बन्दी होने से बच गया। पीसा पर हमला करने के लिए फ़्लौरैंसवालों ने १०००० फ़्रांसीसी सेना को बुला भेजा था,—उनके लिए इससे बढ़कर भयंकर और कोई बात नहीं थी। कुस्तुन्तुनिया के सुलतान ने अपने पड़ोसियों का विरोध करने के लिए ग्रीस में १०००० तुर्कों को भेजा और जब लड़ाई समाप्त हो गई तो ये तुर्क वापस जाने को तैयार नहीं हुए। ग्रीकों के म्लेच्छों का ग़ुलाम होने का यही आरम्भ था। अतएव जो लोग विजय के आकांक्षी नहीं हैं, वे इस प्रकार की सेना को भले ही निमंत्रित कर लें। ये सेनाएँ भाड़ैतू सेनाओं से भी अधिक भयंकर होती हैं, क्योंकि इनमें एका होता है और एक तीसरी शक्ति के आज्ञाधीन रहती हैं। भाड़ैतू सेना तो एकाएक तुम्हें हानि नहीं पहुँचा सकती क्योंकि विजय करने के बाद उन्हें जब तक अच्छा अवसर नहीं मिलेगा तब तक वे तुम पर हमला नहीं करेंगी। इन भाड़ैतू सिपाहियों को तुमने नौकर रखा है और इस कारण उस मनुष्य को जिसे तुमने इनका कप्तान बनाया है, अपने वंश में लाने और तुम्हारे विरुद्ध करने के लिए समय चाहिए। सारांश यह कि भाड़ैतू सेना से उसकी कायरता और लड़ने की अनिच्छा के कारण भय रहता है किन्तु विदेशी सहायक सेनाओं से बड़ा ख़तरा तो यह है कि वे बड़ी साहसी और बहादुर होती हैं। अतएव बुद्धिमान् राजा सदा इन विदेशी सेनाओं से अलग रहता है। वह इस सेना की सहायता से जीतने की अपेक्षा अपनी निजी सेना के कारण हारना बेहतर समझता है क्योंकि दूसरे की सहायता से जो

विजय प्राप्त होती है उससे अपना कोई लाभ नहीं होता। मैं सीज़र वोर्जिया के उदाहरण देने में नहीं हिचकता। इस ड्यूक ने फ़्रांसीसी सहायक सेना के साथ रोमग्ना पर अधिकार जमाया था। उसकी आगे की सेना में तो निरे फ़्रांसीसी सिपाही थे और इनकी सहायता से उसने इमोला और फोर्ली पर अधिकार कर लिया। किन्तु उसने इनको खतरनाक समझ कर ओर्सिनी और विटेली को भाड़े पर रख लिया। कुछ दिनों वाद उसने इन्हें भी अविश्वासी और भयंकर समझकर निकाल दिया और वह केवल अपने आदमियों पर ही भरोसा रखने लगा। यदि हम इन सेनाओं का भेद जानना चाहें तो हमें चाहिए कि हम ड्यूक की उस समय की ख्याति का मिलान करें, जव उसके पास फ़्रांसीसी सेना थी, और जब उसके पास भाड़ैतू फ़ौज थी तथा जब वह केवल अपने आदमियों ही के भरोसे डटा हुआ था। खोज करने से पता लगेगा कि उसकी ख्याति बढ़ती गई और जब लोगों ने देखा कि वह अपने और अपने आदमियों के बल पर है, तब लोगों पर उसका बहुत अधिक आतंक छा गया।

मैं अधिकांश इटालियन उदाहरण तो देता ही हूँ किन्तु यहाँ साइराक्यूज़ के हियरो का नाम लिये बिना मुझसे नहीं रहा जाता। जब यह साइराक्यूज़ की सेनाओं का सेनापति बनाया गया तो इसने भाड़ैतू सेना की निरर्थकता एकदम समझ ली और उसने यह भी देखा कि न तो उसके रखने में कल्याण है और न उसके निकाल देने ही में भलाई है। अतएव उसने उसको छोटी-छोटी टुकड़ियों

में बाँट दिया और उसके बाद से वह अपने ही सिपाहियों को लेकर लड़ाई लड़ने लगा। मैं बाइबिल से भी इस विषय का एक उदाहरण देना चाहता हूँ। जब डेविड ने सॉल से कहा कि मैं फिलिस्टाइन वीर गोलिएथ से लड़ूँगा तो सॉल ने उसको उत्तेजित करने के लिए उसे अपने राजकीय अस्त्र-शस्त्र दे दिये। किन्तु डेविड ने उनकी परीक्षा करके उन्हें यह कहकर लौटा दिया कि मैं इनसे ठीक तरह से नहीं लड़ सकता और इस कारण उसने शत्रु का सामना अपने चाक़ू और अपने ही धनुष से किया। सारांश यह कि दूसरों के अस्त्र या तो तुम्हें धोखा देंगे,या तुम्हारे लिए बोझ हो जायँगे और या तुम्हारे रास्ते में रुकावट डालेंगे। लुई ग्यारहवें के पिता चार्ल्स आठवें ने जब अपने देश को अँगरेज़ों की ग़ुलामी से स्वतन्त्र कर लिया तो उसने अपनी ही सेना होने की आवश्यकता को भली भाँति समझ लिया और उसने अपने यहाँ देशी सेना की एक नई प्रणाली चलाई। उसके बाद उसके लड़के लुई ने उस सेना को दबाकर स्विस लोगों को भाड़े पर रखना शुरू किया और उस नीति का बुरा परिणाम प्रत्यक्ष है। स्विस लोगों को भर्ती कर लेने के कारण उनकी ख्याति बढ़ गई है, और उससे फ़्रांसीसी सेना का दिल टूट गया है। पैदल सेना तोड़ दी गई है, और फ़्रांसीसी घुड़सवार सेना को विदेशियों की सहायता सदा अपेक्षित रहती है। बराबर स्विस सिपाहियों की सहायता पाते रहने के कारण वे समझने लगे हैं कि हम उनके बिना विजय प्राप्त नहीं कर सकते। इसका परिणाम यह है कि वे स्विस लोगों का

सामना नहीं कर सकते और उनकी सहायता के बिना वे दूसरों से लड़ने का साहस नहीं करते। इस प्रकार फ़्रांसीसी सेना मिश्रित है। उसमें कुछ तो भाड़ैतू है और कुछ देशी सेना है। यह सेना केवल भाड़ैतू सेना से तो कहीं अच्छी है किन्तु राष्ट्रीय सेना से बहुत ख़राब है।

चौदहवाँ अध्याय

सेना के बारे में राजा का क्या कर्तव्य है?

जो लोग शासन करते हैं उनके अध्ययन करने के लिए केवल एक कला है—और वह है युद्ध-विद्या। उसके द्वारा जो राजा पैदा हुए हैं वे तो अपना पद बनाये रखते ही हैं, किन्तु जो राजा के घर उत्पन्न नहीं हुए और राजा होना चाहते हैं, वे भी इस कला की सहायता से राजा हो सकते हैं। अतएव राजा को युद्ध-विद्या के सिवाय और किसी दूसरे विषय का न तो अध्ययन करना चाहिए और न किसी का ध्यान ही करना चाहिए। इसके विपरीत यह भी देखा जाता है कि जब राजे युद्ध का ध्यान छोड़-कर भोग-विलास में पड़ जाते हैं तो राज्य से हाथ धो बैठते हैं। राज्य खोने का मुख्य कारण इस विद्या की लापरवाही करना है, और राज्य पाने का रास्ता इस विद्या में निपुण हो जाना है। फ्रांसिस्को स्फोर्जा युद्ध-विद्या में विशारद होने के कारण उन्नति करके साधारण व्यक्ति से मिलन का ड्यूक हो गया। उसके लड़के लड़ाई के परिश्रम से जी चुराने के कारण ड्यूक से साधारण व्यक्ति हो गये। निःशस्त्र हो जाने की सबसे बड़ी बुराई यह है कि लोग उसे तुच्छ-दृष्टि से देखने लगते हैं, और राजा को इस अपमान से बचने की अत्यन्त आवश्यकता है। सशस्त्र और निःशस्त्र व्यक्तियों में

आकाश-पाताल का अन्तर है। इस कारण सशस्त्र व्यक्ति निःशस्त्र व्यक्ति की आज्ञा का पालन कभी नहीं करेगा। और यह भी सोचना बेकार है कि निःशस्त्र स्वामी अपने सशस्त्र नौकरों के बीच में बेखटके रह सकता है। जब इनमें से एक तो दूसरे की ओर से लापरवाही दिखलाता है और दूसरे के मन में संदेह समाया हुआ है, तब भला ये दोनों मिलकर कोई काम कैसे कर सकते हैं। फिर जिस राजा को युद्ध-विद्या का ज्ञान नहीं है उसके सिपाही न तो उसका आदर करते हैं और न उनका विश्वास हीं करते हैं। अतएव उसे कभी भी युद्ध की ओर से उदासीन नहीं होना चाहिए। और युद्ध की अपेक्षा शान्ति के समय उसे उसकी अधिक चर्चा करनी चाहिए। इसके दो उपाय हैं; एक तो कार्य और दूसरा अध्ययन। कार्य द्वारा शान्ति के समय युद्ध-स्मृति बनाये रखने के लिए उसे चाहिए कि वह अपने सिपाहियों की कवायद, शासन आदि का ध्यान रखे। इसके सिवाय वह बराबर शिकार करता रहे। शिकार करते रहने से उसका शरीर परिश्रम और कष्ट झेलने का आदी हो जाता है। इसके सिवाय उसे देश की भौगोलिक अवस्था का पता लग जाता है। उसे मालूम हो जाता है कि कहाँ-कहाँ पहाड़ हैं, घाटियाँ किधर और किस प्रकार फैली हुई हैं, मैदान किस ओर हैं, नदियों और दल-दलों की क्या अवस्था है। उसे इन बातों की ओर पूरा पूरा ध्यान देना चाहिए। इस भौगोलिक ज्ञान से दो लाभ हैं; एक तो उसे अपने देश का ज्ञान हो जाता है और वह जान जाता है कि उसकी रक्षा किस प्रकार हो सकती है।

फिर एक देश का ज्ञान हो जाने पर दूसरे देश का भौगोलिक-ज्ञान प्राप्त करना सरल हो जाता है। उदाहरण के लिए टस्कनी की नदियों और घाटियों से दूसरे प्रान्त की नदियाँ और घाटियाँ बहुत कुछ मिलती-जुलती हैं। जिसे टस्कनी के भूगोल का ज्ञान है वह अन्य प्रान्तों का हाल सरलता से जान सकता है। और जिस राजा में यह ज्ञान नहीं है, उसमें नेता होने का सर्वप्रथम गुण ही नहीं है, क्योंकि इसी से शत्रु का पता लगाना, मोर्चा लेना, सेना का परिचालन करना, फौज की मंजिलों का तै करना और सुरक्षित स्थान में डेरा लगाना सम्भव है। एकिआई के राजा फिलोपीमैन की प्रशंसा करते हुए लेखकों ने लिखा है कि शान्ति के समय वह सिवाय युद्ध के और किसी बात पर विचार नहीं करता था। और जब वह अपने मित्रों के साथ देहात में जाता तो जगह-जगह ठहर कर पूछताः यदि शत्रु पहाड़ी के ऊपर हो और हम लोग फ़ौज के साथ यहाँ नीचे पड़े हों तो किसको अधिक सुविधा होगी? हम किस प्रकार अपना क्रम बनाये रखकर उसके पास पहुँच सकते हैं? यदि हम यहाँ से पीछे हटना चाहें तो कैसे जायेंगे? यदि हमारे शत्रु पीछे हटें तो हम किस प्रकार उनका पीछा करेंगे? और इस विषय पर बहस करते समय वह उनकी सम्मति सुनता, अपनी सम्मति देता और अपने तर्क पेश करता था। अतएव युद्ध के समय उसकी सेना सब तरह से तैयार रहती थी। किन्तु साथ ही साथ राजा को इतिहास पढ़ना और बड़े आदमियों के कामों का अध्ययन करना चाहिए। उसे देखना चाहिए कि वे युद्ध में क्या

करते थे। उसे उनकी विजय और पराजय के कारणों का अध्ययन करना चाहिए जिससे वह विजय के कारणों को समझ सके और पराजय के कारणों से अपना बचाव कर सके। और इन सबसे बढ़कर उसे देखना चाहिए कि किस बड़े आदमी ने किस दूसरे बड़े आदमी का पदानुसरण किया था। उदाहरण के लिए कहा जाता है कि सिकन्दर ने एकिलीस, सीज़र ने एलेक्जेण्डर और सिपियो ने साइरस का अनुकरण किया था। और जिसने जिनोफन की लिखी हुई सिपियो की जीवनी पढ़ी है, वह जानता है कि सिपियो ने किस प्रकार नम्रता, स्नेह और उदारता में साइरस के उन गुणों का अनुसरण किया था, जिनका जिनोफन ने वर्णन किया है।

बुद्धिमान् राजा का कर्तव्य है कि वह शान्ति के समय सुस्त और बेकार न रहे, किन्तु परिश्रम करके अपने फ़ुर्सत का कभी इस तरह काम में लावे जिससे विपत्ति के समय वह उसके काम आवे और जब उसका भाग्य पलटा खाय तो वह उसका सामना करने को तैयार रहे।

पंद्रहवाँ अध्याय

उन विषयों के बारे में जिनके लिए सारे मनुष्यों और विशेष कर राजाओं की बुराई या प्रशंसा होती है

अब यह देखना है कि राजा को अपने मित्रों और प्रजा के साथ किस प्रकार का व्यवहार करना चाहिए। और मुझे भय मालूम पड़ता है कि चूँकि दूसरे लोग इस विषय पर बहुत कुछ लिख चुके हैं, इसलिए मेरा कहना लोगों को धृष्टता मालूम होगी। किन्तु मैं काल्पनिक बातों को छोड़कर सत्य और व्यावहारिक बात बतलाना चाहता हूँ जिससे समझदार लोगों को उनसे लाभ हो। बहुत लोगों ने ऐसे राज्यों और प्रजातन्त्रों की कल्पना की है जो कभी वास्तविक स्थिति में नहीं रहे। हमारे जीवन-निर्वाह करने का ढंग उस क्रम से बिल्कुल भिन्न है जिस क्रम से हमें जीवन व्यतीत करना चाहिए। और जो व्यक्ति वास्तविक स्थिति का ध्यान छोड़कर आदर्श बातों की ओर जाता है वह स्वयं अपना सर्वनाश कर लेता है। अतएव जो मनुष्य ऐसे लोगों के बीच में रहते हुए भी, जो अच्छे नहीं हैं, सत्य और सुन्दर बातों की दुहाई देता है, उसे बड़ी हानि उठानी पड़ती है। इसलिए जो राजा अपनी सत्ता कायम रखना चाहता है उसे चाहिए कि वह यह जाने कि किस समय अच्छाई करना उचित है और किस समय अनुचित; और किस

अवस्था में भला बनना हानिकारक है। इसी कारण मैं आदर्श काल्पनिक राजा की बात छोड़कर यह कहता हूँ कि सब लोगों में—और विशेष कर राजाओं में—कुछ ऐसे गुण होते हैं जिनके कारण उनकी प्रशंसा या बुराई होती है। इस प्रकार कोई उदार, कोई सूम, कोई शाहखर्च, कोई लुटेरा, कोई क्रूर, कोई दयालु, कोई झूठा, कोई वादे का सच्चा, कोई जनाना तो कोई तेज-मिजाज, कोई करुणापूर्ण तो कोई घमंडी, कोई सच्चरित्र तो कोई दुश्चरित्र कोई 'कोई स्पष्ट तोलचाक, कोई सरल तो कोई कठिन, कोई गम्भीर तो कोई छिछोरा, कोई धार्मिक तो कोई अविश्वासी समझा जाता है। इनमें से जितने अच्छे गुण हैं वे सब राजा में होने चाहिए। किन्तु मनुष्य के लिए यह असम्भव है। इसलिए उसे कम से कम यह तो अवश्य ही चाहिए कि वह उन अवगुणों से दूर रहे जिनके कारण राज्य जाने का खटका है। और जो अवगुण इतने संगीन नहीं हैं, उनको समझ बूझ कर अपने में रखे। किन्तु इनमें से कोई कोई दुर्गुण जो राज्य के लिए आवश्यक हैं और उन दुर्गुणों के कारण उसकी जो बदनामी हो, उसकी उसे परवाह न करनी चाहिए। यदि मनुष्य ध्यानपूर्वक विचार करे तो उसे मालूम होगा कि कुछ बातें यों तो बहुत अच्छी हैं किन्तु यदि उन पर अमल किया जाय तो उनसे नाश हो जाता है। और इसके विपरीत कुछ ऐसी बातें हैं जो दुर्गुण समझी जाती हैं किन्तु जिनके अमल करने से उन पर अमल करनेवाले व्यक्ति की रक्षा और भलाई होती है।

सोलहवाँ अध्याय

उदारता और सूमपने के विषय में

मैं उपरोक्त गुणों में से प्रथम गुण का वर्णन करते हुए यह कहूँगा कि उदार समझा जाना बड़ी अच्छी बात है। किन्तु जो उदारता लोगों से तुम्हारा डर छुड़ा देती है, वह तुम्हारे लिए हानिकर होगी। यदि उदारता को उचित रूप से वर्ता जाय तो उसका पता भी न लगेगा और साथ ही साथ लोग तुम्हें सूम होने का लांछन भी न लगा सकेंगे। किन्तु जो राजा मनुष्यों में उदार होने का नाम कमाना चाहता है उसे हर प्रकार का खर्चीला दिखावा रखना पड़ता है और उस दिखावे को बनाये रखने के लिए उसे अपनी सब आमदनी खर्च कर देनी पड़ती है, और अन्त में उसे अपनी प्रजा पर भारी-भारी कर लगाने पड़ते हैं, और रुपया पाने के लिए हर एक उपाय करने होते हैं। इन कामों से उसकी प्रजा उससे घृणा करने लग जाती है। (अन्धाधुन्ध खर्च करने के कारण) वह गरीब हो जाता है और गरीबी के कारण लोग उसका कम आदर करने लगते हैं। इस प्रकार वह अपनी उदारता से भला तो थोड़ों का करता है किन्तु नुकसान बहुतों को पहुँचा देता है, और तनिक-सी गड़बड़ी भी उसे व्याप जाती है तथा हर एक दुर्घटना से उसको भय होने लगता है। यदि वह अपनी अवस्था

कुछ दिनों बाद समझ ले और अपना क्रम बदलना चाहे तो लोग उस पर सूम हो जाने का लांछन लगाने लग जाते हैं। अतएव राजा को चाहिए कि वह समझ ले कि यदि उसकी उदारता को लोग जान जायँगे तो उसे हानि होगी। इसलिए यदि वह बुद्धिमान् है तो उसे अपने को सूम कहे जाने पर आपत्ति करनी चाहिए। जब लोग देखेंगे कि उसके सूमपने के कारण राज्य की आमदनी व्यय के लिए पर्याप्त होती है, और वह अपने शत्रुओं से अपनी रक्षा कर सकता है तथा अपनी प्रजा पर बिना अधिक बोझ डाले हुए राज्य की वृद्धि के लिए लड़ाई लड़ सकता है तो समय पाकर लोग उसे अधिक उदार कहने लगेंगे क्योंकि वास्तव में वह उन सब पर उदारता करता है जिन पर वह कर नहीं बढ़ाता—और ऐसे लोगों की संख्या बहुत अधिक होती है। वह शायद कुछ थोड़े लोगों के लिए सूम है क्योंकि उसकी उदारता से उन्हें कुछ प्राप्त नहीं होता।

अपने समय में हमने केवल उन लोगों को कुछ बड़ा काम करते देखा है जो सूमपने के लिए बदनाम थे। और सब लोगों ने तो अपना नाश किया। पोप दूसरे जूलियस ने पोप का पद प्राप्त करने के लिए उदारता का नाम पैदा कर लिया था किन्तु पोप हो जाने पर उसने अपनी वह उदारता छोड़ दी। इसका कारण यह था कि वह फ्रांस से युद्ध करना चाहता था और इस काम के लिए धन की आवश्यकता थी। उसने कितनी ही लड़ाइयाँ लड़ीं, किन्तु उसे कर बढ़ाने की आवश्यकता नहीं पड़ी। क्योंकि बहुत दिन तक किफायत करने के कारण लड़ाई के लिए उसने पर्याप्त धन

बचा लिया था। यदि स्पेन के वर्तमान राजा ने उदारता का नाम पैदा करने की परवाह की होती तो वह इतनी लड़ाइयाँ लड़कर जीत नहीं सकता था। अतएव यदि राजा चाहता है कि वह अपनी प्रजा को न लूटे; और अपनी रक्षा भली भाँति कर सके, यदि उसकी इच्छा है कि वह निर्धन न हो जाय और लोग उसको तुच्छ दृष्टि से न देखें, और यदि वह चाहता है कि वह धन लूटने के लिए लाचार न हो जाय तो उसे सूम होने की बदनामी की परवाह न करनी चाहिए। वास्तव में सूमपन की बुराई ऐसी है कि उससे राज्य बनाये रखने में सहायता मिलती है। शायद कुछ लोग कहने लगें कि सीजर को उदारता के कारण ही साम्राज्य मिला था; तथा और भी ऐसे बहुत से लोग हैं जिनको उदार होने—या उदारता के लिए प्रसिद्ध होने—के कारण सर्वोच्च पद प्राप्त हुए थे, तो मैं यह उत्तर दूँगा कि तुम या तो राजा हो या राजा होने जा रहे हो। पहली हालत में उदारता हानिकारक है। दूसरी अवस्था में अवश्य ही यह आवश्यक है कि लोग तुम्हें उदार समझें। सीजर उन आदमियों में था जो रोम पर हुकूमत करना चाहता था। किन्तु यदि रोम पर सत्ता प्राप्त करने के बाद वह जीवित रहता और अपने खर्च कम न करता तो अवश्य ही वह अपने साम्राज्य को नष्ट कर देता। कुछ लोग यह तर्क देंगे कि इतिहास में बहुत से ऐसे राजाओं का पता लगता है जिन्होंने अपनी सेनाओं की सहायता से बड़े-बड़े काम किये हैं और जो अपनी उदारता के लिए विख्यात थे। तो मैं इसका यह उत्तर

दूँगा कि राजे या तो अपना निज का या अपनी प्रजा का या दूसरों का धन खर्च करते हैं। अपना या अपनी प्रजा का धन ख़र्च करते समय उसे किफायत करनी चाहिए, किन्तु दूसरों का धन खर्च करते समय उसे अत्यन्त उदार हो जाना चाहिए। यह उदारता उस राजा के लिये और भी आवश्यक है जो अपनी सेना को लिये हुए दूसरों को लूटता, खसोटता और उजाड़ता हुआ, दूसरे के धन पर अधिकार करता हुआ देश-विदेश घूमता है। यदि वह उदारता न दिखलावेगा तो उसके सिपाही उसका साथ न देंगे। और जो धन तुम खर्च कर रहे हो यदि वह तुम्हारा नहीं है तो तुम बहुत उदार हो सकते हो—साइरस, सीज़र और सिकन्दर इसी कारण से उदार थे। दूसरों का धन खर्च करने से तुम्हारी ख्याति कम न होगी किन्तु उलटी बढ़ेगी। हाँ, यदि तुम अपना धन खर्च कर डालो तो उससे तुम्हारी हानि होगी। उदारता के बराबर और कोई वस्तु अपने आप को नष्ट नहीं कर देती, क्योंकि यदि तुम बहुत उदार हो तो कुछ दिनों बाद (धन खर्च हो जाने के कारण) तुम में उदारता करने की शक्ति ही न रह जायगी। उदारता के कारण तुम निर्धन और अपमान के पात्र हो जाओगे, और यदि निर्धनता से बचने का उपाय करोगे तो लोग तुम्हें लुटेरा समझने लगेंगे और तुमसे घृणा करने लगेंगे। राजा को सबसे अधिक भय दो बातों से करना चाहिए: एक तो प्रजा की घृणा और दूसरे हिकारत। उदारता के कारण तुम्हारी इनमें से एक न एक दशा अवश्य ही होगी। अतएव जान-बूझकर लुटेरे

का नाम पैदा करने की अपेक्षा सूम कहलाना कहीं अच्छा है, क्योंकि सूम को तो लोग केवल भला-बुरा कह कर चुप हो जाते हैं किन्तु लुटेरे को बदनाम करने के साथ-साथ वे उससे घृणा भी करने लगते हैं।

हैं। किन्तु जैसे ही तुम पर कोई विपत्ति आवेगी, वे विद्रोह कर देने को तत्पर हो जायँगे। और जो राजा उनकी बातों पर विश्वास करके अपनी रक्षा की तैयारी नहीं करता, वह नष्ट हो जाता है। क्योंकि जो मैत्री खरीदी जाती है किन्तु आत्मा के उच्च भावों से उत्पन्न नहीं है, वह अच्छी भले ही मालूम हो किन्तु स्थिर नहीं होती और विपत्ति के समय काम में भी नहीं आती। और जिस आदमी से लोग भय नहीं खाते और केवल स्नेह करते हैं, उसे हानि पहुँचाने में उन्हें कुछ भी हिचकिचाहट नहीं होती। इसका कारण यह है कि प्रेम कृतज्ञता के बन्धन से स्थिर रहता है और मनुष्य ऐसा स्वार्थी जीव है कि वह स्वार्थ के सामने कृतज्ञता के बन्धन को तुरंत तोड़ डालता है। इसके विपरीत भय कम होने चाहिए क्योंकि बिना इस आतंक के वह उन पर शासन नहीं कर सकता।

हैनिबल के प्रसिद्ध कामों में एक बात यह भी मशहूर है कि यद्यपि उसकी सेना बहुत बड़ी थी और उसमें बहुत सी जातियों के सिपाही थे तथा वे विदेशों में लड़ते थे फिर भी न तो विजय और न आपत्ति के समय ही उनमें आपस में या (उससे) राजा से कोई झगड़ा हुआ। इसका कारण यही था कि वह अत्यन्त निर्दयी था और इस निर्दयता तथा दूसरे गुणों के कारण सारे सिपाही उसका बहुत आदर करते और उससे बुरी तरह डरते थे। यदि उसमें इतनी निर्दयता न होती तो उसके अन्यान्य गुणों के कारण उसके सिपाही इस तरह उसके कब्जे में न रहते। अवि-

चारशील लेखक उसके कामों (विजय) की प्रशंसा करते हैं किन्तु साथ ही वे उसके मूल कारण (अर्थात् उसकी निर्दयता) को बुरा बतलाते हैं। यदि मेरे इस कथन का कि निर्दयता ही के कारण उसे सफलता हुई प्रमाण लेना हो तो मैं कहूँगा कि सिपियो का उदाहरण ले लो। सिपियो के बराबर योग्य और सद्गुणशाली सेनापति बहुत कम हुए हैं किन्तु स्पेन में उसकी सेना बाग़ी हो गई। इस बग़ावत का एक मात्र कारण उसकी अत्यन्त दयालुता थी। इस दयालुता के कारण उसने अपने सिपाहियों को सैनिक शासन के विरुद्ध अत्यधिक स्वच्छन्दता दे रखी थी। इसी कारण सिनेट में फेलियस मैक्सिमस ने उस पर अत्यन्त दयालुता का अभिशाप लगाकर उसे रोमन सेना का बिगाड़नेवाला बतलाया था।

सिपियो के एक अफसर ने लोक्री को नष्ट कर डाला, किन्तु सिपियो ने अपनी सरल प्रकृति के कारण उसे दण्ड नहीं दिया। इसके लिए वह इतना बदनाम हुआ कि इस बात की चर्चा करते हुए उसकी ओर लक्ष्य करके किसी ने सिनेट में यह कहा था कि बाज़-बाज़ लोग ऐसे हैं जो स्वयं तो कभी गलती नहीं करते किन्तु दूसरों की गलतियों को दुरुस्त नहीं कर सकते। यदि वह साम्राज्य के समय भी अपनी यह आदत कायम रखता तो अवश्य ही उसकी ख्याति में धब्बा लग जाता किन्तु जब तक वह सिनेट की अध्यक्षता में रहा तब तक उसका यह हानिकारक सद्गुण केवल छिपाया ही नहीं जाता था किन्तु इसके लिए उसकी प्रशंसा भी की जाती थी। अतएव इस विषय में मेरा निष्कर्ष यह है कि

प्रेम तो लोग अपने मन से करते हैं—उनसे जवर्दस्ती प्रेम नहीं कराया जा सकता, किन्तु राजा जवर्दस्ती उनमें भय उत्पन्न कर सकता है और बुद्धिमान् राजा को चाहिए कि वह प्रजा में उसी वात (भय) को उत्पन्न करने की चिन्ता करे जिसका उत्पन्न करना उसके वश में है—और जो वात (प्रेम) प्रजा में पैदा करना उसके हाथ में नहीं है उसमें अपना समय नष्ट न करे। पर उसे अवश्य ही यह उद्योग करना चाहिए कि लोग उससे घृणा न करने लगें।

—

अठारहवाँ अध्याय

राजा को किन-किन मामलों में अपने वचन का पालन करना चाहिए

हर एक आदमी जानता है कि राजा के लिए वचन का पालन करना, सच्चाई के साथ रहना और धूर्तता से दूर रहना कितनी प्रशंसा की बात है। तो भी अपने समय के अनुभव से हमें मालूम होता है कि जिन राजाओं ने अपना वचन पालन करने की अधिक परवाह नहीं की और जिन्होंने धूर्तता से अपने विपक्षियों के हाथ-पैर ढीले कर दिये थे उन राजाओं ने ही महान् कार्य किये हैं और उन राजाओं को हरा दिया है जिन्होंने सच्चाई से काम करना उचित समझा था। अतएव तुम्हें जानना चाहिए कि लड़ने के दो तरीके हैं—एक तो कानूनी और दूसरा ताकत से। पहला तरीका आदमियों का है और दूसरा जानवरों का। किन्तु पहला तरीका बहुधा काफी नहीं होता इसलिए लोगों को दूसरे उपाय की शरण लेनी पड़ती है, अतएव जानवरों और आदमियों दोनों ही का भली भाँति उपयोग जानना अत्यन्त आवश्यक है। प्राचीन ग्रन्थकार राजाओं को ये बातें घुमा फिरा कर बतलाते थे। उन्होंने लिखा है कि ऐकिलोस तथा अन्य राजकुमार शिरन नामक निडुन के पास शिक्षा के लिए भेजे गये थे और उसने उन्हें अपने शासन में रखा

था। राजकुमारों की शिक्षा के लिए एक ऐसे जीव (जो आधा मनुष्य और आधा पशु था) को चुनने का यह तात्पर्य था कि राजाओं को मानुषिक और पाशविक दोनों ही प्रकृति का उपयोग करना जानना चाहिए और उसे यह समझ लेना चाहिए कि एक के विना दूसरी प्रकृति बेकार है। इस प्रकार पशु के समान कार्य करने पर राजा को मालूम हो जायगा कि उसे लोमड़ी और शेर दोनों ही का अनुकरण करना आवश्यक है क्योंकि शेर अपने को फंदों से नहीं बचा सकता और लोमड़ी भेड़ियों से अपनी रक्षा नहीं कर सकती। अतएव राजा को जाल से बचने के लिए, लोमड़ी और भेड़ियों को डराने के लिए, शेर होना पड़ता है। जो लोग केवल शेर होना चाहते हैं वे इस बात को नहीं समझते। इसलिए जब बुद्धिमान् राजा यह देखे कि वचन-पालन करने से अपनी हानि होती है—और जिन कारणों से वह वचनबद्ध हुआ था वे नहीं रह गये—तो उसे अपने वचन के विरुद्ध काम करने में आनाकानी न करनी चाहिए। यदि सब लोग सज्जन और भले होते तो यह नियम बड़ा खराब था किन्तु मनुष्य खराब हैं और समय पड़ने पर अपनी प्रतिज्ञा का पालन न करेंगे, इसलिए उनके साथ तुम्हें अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार चलने की जरूरत नहीं है। इसके सिवाय अपनी प्रतिज्ञा भंग करने के लिए कोई कानूनी कारण तलाश कर लेना कोई मुश्किल काम नहीं है। आधुनिक समय में राजाओं की बेइमानियों से शान्ति भङ्ग और प्रतिज्ञाएँ रद्द होने के अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं और जो लोमड़ी का अनुकरण कर सके हैं वे ही सबसे अधिक सफल हुए हैं।

किन्तु अपनी इन कार्रवाइयों को छिपाने की और इसके लिए पल्ले सिरे के धूर्त और कपटी होने की बड़ी आवश्यकता है। मनुष्य इतने सीधे और तत्कालीन आवश्यकताओं को पूरा करने के इतने इच्छुक होते हैं कि धोखा देनेवाले को कुछ न कुछ धोखे में आ जानेवाले आदमी सदा ही मिल जाते हैं। मैं केवल एक उदाहरण दूँगा। छठवें अलेक्जेण्डर ने आदमियों को धोखा देने के सिवाय और कुछ नहीं किया, वह सिवाय धोखा देने के उपाय के और कुछ नहीं सोचता था और उसे धोखा देने के उपाय मिल जाया करते थे। उसके बराबर शायद ही और कोई आदमी दूसरों को अपना विश्वास दिला सकता था, शायद ही कोई आदमी उससे अधिक कड़ी कसमें खाकर प्रतिज्ञा करता था और शायद ही कोई दूसरा आदमी अपने वादों को इस बुरी तरह से तोड़ता था। फिर भी लोग उसके धोखे में आ जाते थे। इसका कारण यह था कि उसे लोगों की प्रकृति की कमजोरी भली भाँति मालूम थी। अतएव राजा में उपर्युक्त गुणों के होने की इतनी आवश्यकता नहीं है जितनी आवश्यकता इस बात की है कि लोग समझें कि उसमें ये गुण विद्यमान हैं। मैं तो यह बात तक कहने का साहस करूँगा कि राजा में इन गुणों का होना और सदा उनका वर्तना बड़ा भयंकर है किन्तु अपने में उनके अस्तित्व को संसार पर प्रकट करना लाभदायक है। अपने को धर्मात्मा, नम्र, दयालु, धर्मभीरु, विश्वासी प्रकट करो और चाहे ये गुण रखो भी किन्तु सदा इस बात का ध्यान रखो कि जब कभी आवश्यकता

आ पड़े तब तत्काल इसके विपरीत काम करने को तैयार रहो। यह भली भाँति समझ लेना चाहिए कि कोई भी राजा—और विशेषकर नया राजा—मनुष्यों के सद्‌गुणों को नहीं वर्त सकता। उसे समय समय पर राज्य को कायम रखने के लिए धर्म, सचाई, मनुष्यत्व और दया के विरुद्ध काम करने पड़ते हैं। अतएव उसका दिमाग ऐसा होना चाहिए कि हवा के रुख के साथ वह अपने को बदल सके। सौभाग्य और विपत्ति के अनुकूल काम करने की उसमें क्षमता होनी चाहिए और जैसा कि मैं कह चुका हूँ—यथा-सम्भव उसे सद्‌गुण न छोड़ने चाहिए किन्तु यदि आवश्यकता आ पड़े तो बुराई के लिए सदा तैयार रहना चाहिए। राजा को इस बात का सदा ध्यान रहे कि उसके मुँह से उपर्युक्त पाँच गुणों के प्रतिकूल कोई बात न निकलने पावे और देखने और सुनने में ऐसा मालूम पड़े कि वह सत्य, ईमानदारी, दयालुता, और धर्म का मूर्तिमान्, अवतार है। और धार्मिक होने के समान कोई दूसरा गुण आवश्यक नहीं है क्योंकि जनसाधारण केवल आँख से देख सकते हैं, हाथ से टटोल नहीं सकते क्योंकि ऊपरी बात तो हर एक आदमी देख सकता है, किन्तु हृदय की बात जानने की योग्यता हर एक में नहीं होती, जैसे तुम बाहर से मालूम पड़ते हो वैसे हर एक देख सकते हैं, किन्तु तुम्हारे आन्तरिक स्वरूप को समझने वाले कम हैं और जो थोड़े से आदमी समझ भी सकते हैं वे जन-साधारण की राय के विरुद्ध आवाज नहीं उठा सकते क्योंकि राज्य की सारी शक्ति उनकी सहायता करने को तैयार रहेगी, और

मनुष्यों—विशेष कर राजाओं के कामों में उद्देश्य का अच्छा होना ही सब कुछ है।

अतएव राजा को चाहिए कि वह दो बातें—दो उद्देश्य—अपने सामने रखे। एक तो यह कि वह अपना जीवन कायम रखे, दूसरा यह कि अपना राज्य बनाये रहे। इन उद्देश्यों के प्राप्त करने में किन उपायों का अवलम्बन किया गया है, यह कोई न देखेगा। लोग उन उपायों को उद्देश्य की सफलता के कारण अच्छा समझेंगे क्योंकि जनता पर ऊपरी दिखाव का असर पड़ता है और वह परिणाम पर ध्यान देती है। और संसार में केवल साधारण लोगों ही को बसा हुआ समझना चाहिए क्योंकि यहाँ कुछ समझदार लोगों की सुनवाई तब होती है जब जनता को देखने और सोचने के लिए कुछ भी बात नहीं मिलती। इस समय एक ऐसा राजा मौजूद है जिसका मैं नाम नहीं लेना चाहता—जो सिवाय शान्ति और प्रतिज्ञा-पालन के और किसी बात का उपदेश नहीं देता, किन्तु वास्तव में वह इन दोनों बातों का घोर शत्रु है और यदि वह इनमें से एक का भी अनुसरण करता तो उसका राज्य और ख्याति दोनों ही नष्ट हो जातीं।

उन्नीसवाँ अध्याय

हमें यह उपाय करना चाहिए कि संसार न तो हमसे घृणा करे और न हमें तुच्छ समझे

जिन गुणों को मैं विशेष महत्त्व-पूर्ण समझता था उनके बारे में मैं कह चुका हूँ। शेष गुणों के विषय में मैं संक्षेप में विचार करूँगा। उन पर विचार करते समय मेरा यह सिद्धान्त रहेगा कि राजा को वे बातें न करनी चाहिएँ जिनसे लोग उसे तुच्छ समझें या उससे घृणा करें। यदि वह इस बात में सफल हो जाय तो समझ लेना चाहिए कि उसने अपना काम कर लिया और यदि उसमें कोई दोष भी हैं तो उनसे उसे कुछ हानि नहीं पहुँचेगी।

मैं पहले ही कह चुका हूँ कि प्रजा में राजा के प्रति घृणा तब उत्पन्न होती है जब वह उनकी जायदाद और स्त्रियों पर आँख गड़ाता है। यदि वह जनसाधारण की सम्पत्ति और स्त्रियों का अपहरण न करे तो लोग उससे सन्तुष्ट रहेंगे। उसे केवल कुछ थोड़े से उन लोगों से भय रह जायगा जिनकी अभिलाषाएँ बहुत ऊँची हैं और उनको कब्जे में रखने की सैकड़ों तदबीरें की जा सकती हैं। राजा को लोग उस समय तुच्छ दृष्टि से देखते हैं जब उन्हें यह विश्वास हो जाय कि राजा 'क्षणे रुष्टः, क्षणे तुष्टः',

ओछी प्रकृति का, जनाना, कायर या निर्बल है। अतएव राजा को चाहिए कि वह कोई ऐसा काम न करे जिससे ये बातें प्रकट हों। बल्कि उसे अपना चाल-चलन ऐसा रखना चाहिए जिससे उसके कामों से शानशौकत, साहस, गम्भीरता और शक्ति झलका करे और शासन करते समय उसे सदा इस बात का ध्यान रहे कि वह एक बार जो निश्चय करे या आज्ञा दे, वह कभी न बदले। ऐसा करने से लोग जान जायँगे कि उसकी राय का परिवर्तन करना असम्भव है। जो राजा यह नियम बना लेता है वह प्रसिद्ध हो जाता है और लोगों को प्रसिद्ध आदमी पर हमला करने का एकाएक साहस नहीं होता। उसकी प्रजा भी उससे प्रेम करने लगती है। राजा को दो जगहों से खटका रहता है। एक तो भीतरी और दूसरा बाहरी। इस दूसरे खतरे से वह सदा अपनी रक्षा कर सकता है, बशर्ते की उसकी सेना अच्छी और मित्र सच्चे हैं। और अन्दरूनी मामले तो तभी उठते हैं जब देश में षड्यन्त्र होते हैं। यदि राजा के प्रजा-प्रिय होने पर भी बाहरी लोग देश में कोई गड़बड़ी मचाना चाहें तो नैबिस स्पार्टन की भाँति राजा का कोई बिगाड़ न कर सकेगा। अब रहा प्रजा से भय—सो उससे हमेशा सावधान रहना चाहिए क्योंकि बाहरी लोगों की सहायता न मिलने पर भी प्रजा गुप्त रूप से षड्यन्त्र रच सकती है, इसके लिए राजा को चाहिए कि वह प्रजा को सन्तुष्ट रखे और कोई ऐसा काम न करे जिससे लोग उससे घृणा करने या उसे तुच्छ दृष्टि से देखने लगें। षड्यन्त्र को नष्ट

करने की यही सर्वोत्तम तदवीर है क्योंकि षड्यन्त्री यह समझते हैं कि राजा को मार डालने से प्रजा प्रसन्न हो जायगी किन्तु यदि उन्हें मालूम हो जाय कि राजा को मार डालने से प्रजा उनसे बिगड़ जायगी तो षड्यन्त्र करने का साहस उन्हें कदापि न होगा। षड्यन्त्र करना सहल काम नहीं है। उसमें बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। अनुभव से मालूम होता है कि बहुत कम षड्यन्त्र सफल हुए हैं। उसका कारण यह है कि षड्यन्त्र एक आदमी के किये नहीं हो सकता और जो आदमी षड्यन्त्र रचना चाहता है उसे साथी तलाश करने पड़ते हैं। उसका साथ वे ही दे सकते हैं जो कि असन्तुष्ट हैं। और जैसे ही किसी असन्तुष्ट व्यक्ति से तुमने अपना मतलब ज़ाहिर किया कि मानों तुमने उसे अपना असन्तोष मिटाने का मौक़ा दे दिया क्योंकि षड्यन्त्र का भेद खोल देने पर उसे अपनी मनोकामना पूरी करने की आशा हो जाती है। तुम्हारे साथ षड्यन्त्र में तुम्हारी सहायता करने से उसे भयंकर खतरों का सामना करना पड़ेगा और फिर भी यह सन्देह बना रहेगा कि न जाने षड्यन्त्र सफल हो या न हो। किन्तु इसके विपरीत उसे विश्वास है कि तुम्हारा भेद खोल देने पर राजा उससे प्रसन्न हो जायगा और उसका मनोरथ सिद्ध होना प्रायः निश्चित ही है। इस अवस्था में वही व्यक्ति तुम्हारा साथ दे सकता है जो या तो तुम्हारा अत्यन्त सुदृढ़ और सच्चा मित्र हो या राजा का जानी दुश्मन हो। सारांश यह कि षड्यन्त्रकारी को भय, ईर्ष्या, संदेह और दण्ड का डर बना रहता है पर

राजा को ऐसा कोई भय नहीं रहता। प्रत्युत राजसत्ता, कानून, मित्रों की सहायता और राज्य की सारी शक्ति उसकी रक्षा करने को तैयार रहते हैं। यदि इनके अलावा जनता भी उसका भला चाहने लगे तो फिर षड्यन्त्र करने की लोगों को स्वप्न में भी हिम्मत न होगी। क्योंकि यदि राजा अप्रिय होता तो षड्यन्त्र सफल होने से पहले उसका भेद खुलने पर उसे दण्ड का भय रहता, किन्तु प्रजाप्रिय राजा को मार डालने पर भी उसे भय बना रहेगा क्योंकि सारी जनता हत्याकारी की शत्रु बन जायगी और उसे कहीं भी शरण न मिलेगी। इस बात के असंख्य उदाहरण दिये जा सकते हैं किन्तु मैं एक ही उदाहरण देना काफी समझता हूँ। बोलोग्ना के राजा एनीबेल बेण्टिवोग्ली को कनेशी वंशवाल ने षड्यन्त्र करके मार डाला। एनीबेल के कोई वारिस न रह गया। गोविआनी नाम का सिर्फ एक छोटा सा लड़का था जो नाबालिग होने के कारण राजा न हो सकता था। हत्या के बाद जनता ने नाराज होकर कनेशी वंश के कुछ लोगों को मार डाला। जनता के इस बदला लेने का कारण यह था कि वह गियोवानी वंशवालों से प्रेम करती थी। उनका प्रेम इतना अधिक था कि जब एनीबेल की मृत्यु के बाद राजकाज सँभालने योग्य कोई भी सयाना व्यक्ति न रह गया और उन्होंने यह सुना कि फ्लौरेन्स में इस वंश का एक आदमी रहता है तो वे लोग वहाँ गये और उसे ले आये। फ्लौरेन्स वाले उसे अभी तक किसी लुहार का लड़का समझते थे। उस व्यक्ति को फ्लौरेन्स से लाकर इन लोगों

ने उसे राजकाज सौंप दिया और जब तक एनीवेल का लड़का बड़ा न हो गया तब तक वही राज करता रहा।

इन बातों से मैं यह निचोड़ निकालता हूँ कि जब तक प्रजा राजा से प्रेम करती है तब तक उसे षड्यन्त्रों की परवाह न करनी चाहिए किन्तु यदि जनता विरुद्ध हो और उससे घृणा करती हो तो उसे उचित है कि वह हरएक आदमी से सँभल कर रहे। सुशासित राज्यों और विचारवान् राजाओं ने सदा इस बात का ध्यान रखा है कि एक तो अमीरों और सर्दारों को इतना तंग न किया जाय कि वे जान पर खेलने को उतारू हो जायँ और दूसरे जनता को सन्तुष्ट और प्रसन्न रखने में कसर न की जाय। राजा के लिए यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विषय है। हमारे समय में फ़्रांस बहुत अधिक सुव्यवस्थित और सुशासित देश है। वहाँ ऐसी बहुत-सी संस्थाएँ हैं जिनपर राजा की रक्षा और स्वतन्त्रता निर्भर है। इनमें से मुख्य संस्था पार्लियामेण्ट और उसकी सत्ता है। इस राज्य के स्थापन करनेवाले को अमीरों और सर्दारों की उच्चाभिलाषों और अहंमन्यता का पता था। उसे यह भी मालूम था कि जनता उन सर्दारों से डरती है और डर के कारण उनसे घृणा करती है। उसने इन सर्दारों के अत्याचारों से जनता को बचाना चाहा किन्तु यदि वह यह काम राजा को सौंपता तो सर्दार राजा से, जनता का पक्ष लेने के कारण, नाराज़ हो जाते और कभी जनता उससे, सर्दारों की तरफ़दारी करने के कारण, बिगड़ उठती। राजा को इस संकट से बचाने के लिए उसने एक तीसरा

न्यायकर्ता नियुक्त किया। यह नवीन संस्था (पार्लियामेण्ट) सर्दारों पर रोक रखने और जनता का पक्ष लेने में परोक्ष रूप से राजा की सहायता कर सकती थी। राज्य और राजा की रक्षा करने और स्वतन्त्रता को सुरक्षित रखने के लिए इससे बढ़कर और कोई उपाय नहीं किया जा सकता था। इस उपाय का ध्यान-रख कर राजाओं के लिए एक नया नियम बनाया जा सकता है, अर्थात् राजा को चाहिए कि जितने कटु और अप्रिय काम हैं वे दूसरों को सौंप दे और कृपा करने की कुल बातें स्वयं किया करे। मैं फिर कहता हूँ कि राजा को चाहिए कि वह अपने सर्दारों की इज्जत करे किन्तु यह अच्छी तरह ध्यान रखे कि जनता उससे घृणा न करने पावे। शायद रोम का इतिहास पढ़नेवाले लोग यह कहें कि कितने ही रोमन सम्राट् जो बड़े वीर साहसी थे और जिनका जीवन सदाचारी था, वे भी अन्त में प्रजा के द्वारा षड्यन्त्र द्वारा मार डाले गये थे—इस कारण तुम्हारा यह तर्क ठीक नहीं है कि प्रजा को प्रसन्न रखना ही सर्वोत्तम है, इन तर्कों का उत्तर देने के लिए मैं कुछ रोमन सम्राटों के गुणों का वर्णन करके यह दिखलाऊँगा कि जो कुछ मैंने कहा है वह मिथ्या नहीं है। सम्राट् मार्कस, जो दार्शनिक समझा जाता था, से लेकर सम्राट् मैक्सि-मिनस तक—मार्कस, उसका लड़का कमोडस, पर्टिनेक्स, हेलियोगेबेलस, अलेक्जण्डर और मैक्समिनस इतने सम्राट् हुए थे। साधारणतया राजाओं को अमीरों की महत्त्वाकांक्षाओं और जनता की गुस्ताखियों का सामना करना पड़ता है किन्तु रोमन सम्राटों

को एक तीसरी कठिनाई भी झेलनी पड़ती थी, अर्थात् उन्हें रोमन सिपाहियों की क्रूरता और तृष्णा की भी पूर्ति करनी पड़ती थी। यह इतनी बड़ी कठिनाई थी कि इससे बहुत से रोमन सम्राटों का सर्वनाश हुआ क्योंकि जनता और सिपाहियों—दोनों को एक साथ प्रसन्न रखना असम्भव है। इसका कारण यह है कि जनता तो शान्ति चाहती है और इससे शान्तिप्रिय राजाओं को पसन्द करती है, किन्तु सिपाही सैनिक प्रवृत्तिवाले राजाओं को चाहते हैं—ऐसे राजाओं को चाहते हैं जो निर्दयी, लालची और क्रूर हों। वे चाहते हैं कि राजा जनता पर कड़ाई और अत्याचार करे जिससे उन्हें अपनी निर्दयता और लोभ की आकांक्षा पूर्ण करने का मौका मिले। अतएव जो सम्राट् अपनी प्रकृति या चालबाजी से दोनों दलों को नहीं रोक सके वे नष्ट हो गये और जो सम्राट् बनाये गये उनमें से अधिकांश नये थे और वे इन कठिनाइयों को समझते थे इसलिए उन्होंने सिपाहियों की इच्छा पूर्ण करना ही ठीक समझा। हाँ, यह ध्यान अवश्य रखा कि प्रजा को जहाँ तक हो सके वहाँ तक कम ही हानि पहुँचे। सम्राटों को एक का पक्ष लेना आवश्यक था क्योंकि ऐसा न करने से कोई न कोई दल उससे अवश्य घृणा करने लग जाता। राजा को पहले तो इस बात का उद्योग करना चाहिए कि जनता उससे घृणा न करे किन्तु यदि वह जनता की घृणा से नहीं बच सकता तो उसे सब से अधिक शक्तिशाली दलों की दुश्मनी से बचने के लिए सिर तोड़ कोशिश करनी चाहिए। और इसी कारण इन सम्राटों ने जनता की अपेक्षा सिपाहियों

का पक्ष लेना अधिक लाभदायक समझा क्योंकि नये होने के कारण उन्हें अधिक सहायता की आवश्यकता थी। सम्राटों की इस नीति से जनता का लाभ होना न होना सम्राटों की अपनी ख्याति कायम रखने की योग्यता पर निर्भर था।

मार्कस, पर्टिनैक्स, और अलेक्जेण्डर ये तीनों न्यायप्रिय, सीधे-सादे, निर्दयता के शत्रु, दयालु और कोमल-हृदय थे। इसका परिणाम यह हुआ कि मार्कस को छोड़ शेष दोनों का अन्त बड़ा दुःख-पूर्ण हुआ। केवल मार्कस ने सम्मानपूर्वक जीवन व्यतीत किया और उसका अन्त भी अच्छा हुआ। इसका कारण यह था कि उसे अपने पिता से वंश-परम्परागत होने के कारण साम्राज्य मिला था और उसके लिए वह सिपाहियों या जनता का ऋणी नहीं था। इसके सिवाय उसमें बहुत से गुण भी थे जिनके कारण लोग उसका आदर करते थे और जब तक वह जीवित रहा, उसने दोनों दलों में से किसी को भी आगे न बढ़ने दिया। न तो कोई उससे घृणा करता था और न उसे तुच्छ ही समझता था। किन्तु पर्टिनैक्स सिपाहियों की इच्छा के विरुद्ध सम्राट् चुना गया था। उसके पहले कमोडस के राज्यकाल में सिपाही लोग भोग-विलास में मग्न रहा करते थे। पर्टिनैक्स ने चाहा कि वे अपना जीवन-क्रम सुधार लें; किन्तु वे यह नापसन्द करते थे अतएव वे उनसे घृणा करने लगे। इस घृणा के साथ साथ वृद्ध होने के कारण लोग उसे तुच्छ समझने लगे। इसका नतीजा यह हुआ कि उसके शासन-काल के आरम्भ ही में उसका नाश हो गया। इतने पर [illegible]

होता है कि अच्छे और बुरे दोनों ही कामों के करने से लोग घृणा करने लगते हैं अतएव जो राजा अपना राज्य कायम रखना चाहता है उसे बहुधा जबर्दस्ती बुरे काम करने पड़ते हैं। क्योंकि जिस दल की सहायता पर तुम्हारी स्थिति निर्भर है वह यदि खराब हुई तो उसकी बुरी अभिलाषाओं को संतुष्ट करने के लिए तुम्हें खराब काम करने पड़ेंगे और यदि तुम उसकी रुचि के अनुसार बुरे काम न करके अच्छे काम करोगे तो ये अच्छे काम ही तुम्हारे शत्रु हो जायँगे। किन्तु अब अलेक्जेण्डर की हालत देखिए। वह इतना अच्छा था कि उसके चौदह वर्ष के राजत्व-काल में किसी भी व्यक्ति को—बिना अच्छी तरह विचार किये हुए—फाँसी नहीं दी गई। किन्तु लोग उसे जनाना समझते थे, और उसके बारे में यह मशहूर था कि उस पर उसकी माता का प्रभुत्व है। इस कारण लोग उसे तुच्छ समझने लगे। इसका परिणाम यह हुआ कि सेना ने षड्यन्त्र करके उसे मार डाला। इसके विपरीत कमोडस, सैवरस, अण्टोनियस, कैरेकेला, और मैक्सिमिनस बहुत ही क्रूर, अत्याचारी और लालची थे। सिपाहियों को संतुष्ट करने के लिए वे जनता पर हर तरह का अत्याचार करने को तैयार रहते थे। और सैवरस को छोड़कर सबका अन्त खराब हुआ। सैवरस बड़ा योग्य था। यद्यपि वह जनता पर अत्याचार करता था तथापि वह भली भाँति राज्य करता रहा। क्योंकि उसके गुणों के कारण जनता चकित और स्तब्ध हो गई थी तथा सिपाही संतुष्ट थे और उसका आदर करते थे। एक नये राजा के लिए यह बड़ी भारी बात है और इसलिए

मैं दिखलाऊँगा कि सैवरस में सिंह और लोमड़ी दोनों ही के गुणों का पूरा पूरा समावेश था। जिस समय पर्टिनैक्स मारा गया उस समय वह स्लैवोनिया में सेनापति था। वह जानता था कि नया सम्राट् जूलियन बड़ा सुस्त है अतएव उसने अपनी सेना को पर्टिनैक्स की हत्या का बदला लेने को उसकाया। उसने कहा कि पर्टिनैक्स को इम्पीरियल गार्ड ने मार डाला है और उसे दण्ड देना आवश्यक है, इस बहाने वह सेना को रोम में ले आया। उसने किसी पर भी यह प्रकट न होने दिया कि उसकी इच्छा सम्राट् बन बैठने की है। एकाएक उसके रोम में पहुँचने पर सिनेटवाले घबड़ा गये और उन्होंने मारे डर के उसे अपना सम्राट् चुन लिया। जूलियन इसके बाद मर गया। अब उसे केवल दो कठिनाइयाँ रह गईं। एक तो एशिया की सेनाओं के सेनापति निग्रिनस ने अपने आप सम्राट् हो जाने की घोषणा कर दी थी, दूसरे, पश्चिम में एल्बिनस भी सम्राट् बनने का उद्योग कर रहा था। उसने जान लिया कि दोनों से एक साथ लड़ाई छेड़ देने में हानि होने की सम्भावना है। इससे उसने निग्रिनस से अपनी शत्रुता तो खुल्लमखुल्ला प्रकट करके उस पर आक्रमण करने का निश्चय किया और एल्बिनस को उसने धोखा देने की ठानी। उसने उसके पास सीजर की उपाधि भेजी और सिनेट के द्वारा यह पास कराया कि दोनों मिलकर सम्राट् हों। सिनेट ने उसे सैवरस का सहयोगी सम्राट् घोषित कर दिया। एल्बिनस ने इन बातों को सच समझा। किन्तु जब सैवरस निग्रिनस को हराकर मार चुका और पूर्व में सब मामलों को [illegible]

चुका तब उसने रोम में लौटकर एल्बिनस पर यह अभियोग लगाया कि उसने; उसकी भलाइयों का ख्याल न करके, उसे धोखे से मरवा डालने की कोशिश की थी। इस पर उसने कहा कि मुझे लाचार होकर एल्बिनस को उसकी कृतघ्नता का दण्ड देना पड़ेगा। इसके बाद वह फ्रांस गया और वहाँ जाकर उसने उसे मार डाला। यदि सैवरस के कामों की अच्छी तरह जाँच-पड़ताल की जाय तो मालूम होगा कि वह बड़ा भयंकर सिंह किन्तु बड़ा चतुर लोमड़ी था। उससे सब डरते थे। सेना उससे घृणा नहीं करती थी। उसके लालच के कारण लोगों में उसके प्रति जो घृणा पैदा हो गई थी वह उसकी ख्याति के कारण कुछ असर नहीं कर सकती थी। उसका लड़का अण्टोनियस भी बड़ा योग्य था। उसमें वे गुण वर्तमान थे जिनके कारण जनता उससे प्रेम करने लगी। सैनिक प्रवृत्ति रखने के कारण सेना भी उसे चाहती थी, किन्तु उसमें इतनी अधिक क्रूरता थी कि उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। उसने बहुत से लोगों की हत्या की, रोम के अधिकांश और सिकन्दरिया के कुल निवासियों को मरवा डाला। इस कारण सारा संसार उससे घृणा करने लगा। उसके साथ रहनेवाले लोग उससे इतना डरने लगे कि अन्त में उसके एक सैञ्चूरियन ने उसे उसकी सेना के बीच ही में मार डाला। इस घटना से यह सबक़ लेना चाहिए कि यदि कोई आदमी अपनी जान पर खेल जाय तो वह दूसरों की जान सरलता से ले सकता है। इस प्रकार की हत्या से राजे भी नहीं बच सकते, किन्तु इसके लिए अधिक चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि इस

प्रकार के मामले बहुत कम होते हैं। राजा को सिर्फ़ इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वह जिन लोगों से कोई काम ले या जिन्हें अपने पास रखे उनको हानि न पहुँचावे। अण्टोनियस ने यही गलती की थी। उसने उस सैन्चूरियन के भाई को मरवा डाला था और रोज रोज उसे भी धमकाया करता था। यह काम बड़ा ही मूर्खता का और भयंकर था। अन्त में उसका परिणाम भी वैसा ही हुआ। किन्तु अब कमोडस के जीवन पर विचार कीजिए। उसने मार्कस के बाद वंशपरम्परागत रीति से राज्य प्राप्त किया था और उसके लिए अपने पिता की तरह सिपाहियों और जनता को सन्तुष्ट रखना ही काफी था। किन्तु वह निर्दयी और मूर्ख था। जनता पर अत्याचार करने के लिए उसने सिपाहियों को विलासी बना दिया। इसके साथ ही साथ वह लिमेटरों में ग्लेडिमेटरों से लड़ने के लिए स्वयं उतर जाया करता था और ऐसे ही कितने छोटे-छोटे काम करता था जिनके कारण लोगों की नजर में उसका रोब घट गया और उसकी शान कम हो गई। सिपाही उसे तुच्छ दृष्टि से देखने लगे। परिणाम यह हुआ कि एक ओर तो लोग उससे घृणा करने और दूसरी ओर उसे तुच्छ समझने लगे। अन्त में उसके विरुद्ध षड्यंत्र हुआ और वह मार डाला गया। अब मैक्सिमिनस का हाल लिखना बाकी रह गया है। वह बिलकुल फौजी आदमी था। जब सेना अलैक्जेण्डर के जनानेपन से ऊब उठी तो उसकी हत्या के बाद वही सम्राट् चुना गया। किन्तु वह बहुत दिनों तक सम्राट् नहीं रह सका, क्योंकि दो कारणों से लोग उससे

घृणा करने और उसे तुच्छ समझने लगे। पहला कारण तो यह था कि वह नीच वंश में पैदा हुआ था। सब लोग यह जानते कि वह फ्रांस में गड़ेरिये का काम करता था और इस बात के प्रकाशित होने पर लोगों में बड़ी घृणा फैली। दूसरा कारण यह था कि उसने रोम में जाकर सम्राट् का सिंहासन नहीं लिया और वहीं क्रूरता के लिए बदनाम हो गया। उसने अपने दारोगाओं के द्वारा रोम में और साम्राज्य के अन्य भागों में बड़े अत्याचार किये। उसकी इस नीच उत्पत्ति और अत्याचार के कारण सारा संसार उसका दुश्मन हो गया। पहले तो अफ्रिकावालों ने और फिर रोम की सिनेट और इटलीवालों ने उसके विरुद्ध षड्यन्त्र किया। जिस समय वह एक्कीलिया का घेरा डाले हुए था उस समय फ़ौज ने देखा कि वह नगर को धावा करके नहीं ले सकती। इस पर सम्राट् बहुत क्रुद्ध हुआ और सिपाहियों पर अत्याचार करने लगा। उसके अत्याचार से घबड़ा कर और यह देखकर कि सभी लोग उसके शत्रु हैं, उसकी सेना बाग़ी हो गई और उसने उसे मार डाला। मैं अब हेलियोगेबेलस, मैक्रिनस या जूलियन के बारे में कुछ नहीं कहूँगा। क्योंकि वे इतने तुच्छ थे कि सम्राट् होते ही लोगों ने उन्हें खत्म कर डाला। मैं अब इस अध्याय का निचोड़ बतलाता हूँ। आज-कल हमारे समय के राजाओं को सिपाहियों को सन्तुष्ट करने की कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता। यद्यपि आज-कल के राजाओं को भी अपनी सेना का लिहाज कुछ करना ही पड़ता है तो भी अब किसी भी राजा के

पास ऐसी सेना नहीं है जिसका सम्बन्ध देश के शासन पर इतना धनिष्ठ हो जैसा कि रोमन सेना का था। अतएव उन दिनों सिपाहियों को सन्तुष्ट रखने का ध्यान केवल इसलिए रखना पड़ता था कि सिपाही जनता से अधिक शक्तिशाली और भयंकर थे। किन्तु अब तुर्कों और सुलतान को छोड़ कर, किसी भी राजा को सिपाहियों को सन्तुष्ट करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि इस जमाने में जनता सिपाहियों से अधिक बलवान् है। मैं सुलतान को इस नियम से अलग रखता हूँ क्योंकि उसे अपने साथ सदा बारह हजार पैदल और पन्द्रह हजार सवार रखने पड़ते हैं और इन्हीं पर उसके राज्य की रक्षा और शक्ति निर्भर है और इस कारण उसे इन सिपाहियों को मित्र बनाये रखना अत्यन्त आवश्यक है। सुलतान के राज्य का भी यही हाल है। वह बिलकुल ही सिपाहियों के हाथ में है, अतएव जनता की कुछ भी परवाह न करके या उनको सन्तुष्ट रखने को बाध्य है, और यह देखना चाहिए कि सुलतान का यह राज्य अन्य राज्यों के समान नहीं है—हाँ, पोप के राज्य से कुछ कुछ मिलता है क्योंकि इसे न तो हम वंशपरम्परागत राज्य ही कह सकते हैं और न बिलकुल नये राज्य की श्रेणी में ही उसकी गणना कर सकते हैं क्योंकि मृत राजा के लड़के उसके वारिस नहीं होते। वहाँ राजा का चुनाव शक्तिशाली लोगों के हाथ में है। और चूँकि यह रस्म बहुत दिनों से चली आ रही है और इसमें नये राज्यों में होनेवाली कठिनाइयाँ नहीं हैं इस कारण इसे नया भी नहीं कहा जा सकता। इस

राज्य के नियम पुराने हैं और उसमें नया राजा उसी प्रकार समझा जाता है जैसे वंशपरम्परागत प्रथा का नया राजा समझा जाता है। किन्तु अपने विषय पर फिर आइए और देखिए कि उपर्युक्त बातों का अध्ययन करने से क्या पता लगता है। इन बातों पर ध्यान देने से मालूम होगा कि उपर्युक्त सम्राटों में से बाजों ने एक रास्ता पकड़ा और दूसरों ने दूसरा रास्ता पकड़ा। फिर भी दोनों ही प्रकार के सम्राटों में कुछ ऐसे थे जिनका अन्त अच्छा हुआ और कुछ ऐसे हुए जिनका अन्त खराब हुआ। पर्टिनैक्स और अलैक्जेण्डर दोनों ही नये शासक थे। उनके लिए मार्कस की नीति का अनुकरण बेकार और खतरनाक था क्योंकि मार्कस वंशपरम्परा प्रणाली के कारण सम्राट् हुआ था। इसी प्रकार कैराकेला, कमोडस और मैक्सिमिनस को सैवरस का अनुकरण न करना चाहिए था क्योंकि उनमें उसके बराबर योग्यता नहीं थी। अतएव नये राजा को अपने राज्य में मार्कस की नीति का अनुकरण करने की आवश्यकता नहीं है और न उसके लिए यह आवश्यक है कि वह सैवरस की ही नकल करे। किन्तु उसे उचित है कि वह सैवरस से वे बातें ले ले जो उसे अपने नये राज्य की स्थापना में सहायक हों और मार्कस से उन बातों को सीख ले जिनके द्वारा जमे हुए राज्य को लाभ पहुँचाया जा सकता है और जिनसे उसका प्रभुत्व और प्रताप बढ़े।

बीसवाँ अध्याय

क्या किलेबन्दी आदि लाभदायक हैं?

अपने अधिकृत राज्यों पर अपना प्रभुत्व स्थिर रखने के लिए कुछ राजों ने अपनी प्रजा के शस्त्र छीन लिये हैं, कुछ ने अपने अधिकृत देशों के टुकड़े कर डाले हैं, कुछ ने अपनी प्रजा में फूट फैला दी है, कुछ ने उन लोगों को मिलाने की चेष्टा की है जिन्हें वे आरम्भ में अपना विपक्षी समझते थे, कुछ ने किले बनाये हैं और कुछ ने बने-बनाये किले तोड़कर नष्ट कर दिये हैं। यद्यपि जब तक काल-पात्र का विचार न किया जाय तब तक इस विषय में कोई विशेष सम्मति नहीं दी जा सकती, फिर भी मैं साधारण रूप से इस विषय पर विचार करूँगा।

किसी नये राजा ने आज तक अपनी प्रजा को निरस्त्र नहीं किया। इसके विपरीत यदि उसने उसे निरस्त्र देखा है तो हथियार दे दिये हैं। क्योंकि उन्हें हथियार दे देने से वे हथियार तुम्हारे हो जायँगे; जिनकी राजभक्ति संदिग्ध थी, वे पक्के राजभक्त हो जायँगे और जो पहले से राजभक्त थे वे वैसे ही बने रहेंगे और तुम्हारे सहकारी बन जायँगे। सारी प्रजा को तो शस्त्र दिये नहीं जा सकते, तुम केवल थोड़े से आदमियों को ही हथियार दे सकते हो। इनको सशस्त्र करने से इनके द्वारा तुम अन्य निरस्त्र लोगों से अच्छी तरह काम ले सकते हो। जब सशस्त्र लोग देखेंगे कि

तुमने केवल उन्हें हथियार दिये हैं तो वे तुम्हारी इस कृपा से प्रसन्न हो जायँगे; जिन्हें हथियार नहीं मिले वे तुम्हें क्षमा करके अपने आपको यह कहकर समझा लेंगे कि हथियार उन्हीं को मिलने चाहिए जिनमें अधिक योग्यता है, या जिन्हें अधिक खतरा या अधिक आवश्यकता है। किन्तु यदि तुम हथियार छीनना शुरू करो तो वे तुमसे नाराज हो जायँगे। वे समझने लगेंगे, कि तुम कायरता या अपने आपमें भरोसा न होने के कारण उनका विश्वास नहीं करते और इस कारण वे तुमसे घृणा करने लगेंगे। किन्तु तुम बिना हथियारबन्द आदमियों के तो रह ही नहीं सकते अतएव तुम्हें भाड़ैतू सेना रखनी पड़ेगी और भाड़ैतू सेना की उपयोगिता मैं बतला ही चुका हूँ। और यदि यह अच्छी भी हो तो वह बलवान् शत्रुओं और संदिग्ध प्रजा से तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकती। किन्तु, जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ, नया राजा अपनी नई प्रजा को सदा हथियार दे देता है। इतिहास में तो इस बात के उदाहरण भरे पड़े हैं। किन्तु जब किसी राजा को अपने पुराने राज्य के सिवाय कोई नया राज्य मिलता है तो उस नये राज्य को निरस्त्र कर देना आवश्यक हो जाता है। उस नये राज्य में सिर्फ़ उन लोगों के पास हथियार रहने दो जिन्होंने राज्य-प्राप्ति में तुम्हारी सहायता की हो। और समय पाकर इन्हें भी कमजोर और डरपोंक बना दो और ऐसा प्रबन्ध करो कि नये राज्य के कुल शस्त्र तुम्हारे अपने सिपाहियों के पास आ जायँ जो (सिपाही) तुम्हारे साथ तुम्हारे पुराने राज्य में रहते हैं।

हमारे पुरखे और दूसरे बुद्धिमान् लोग कहा करते थे कि पेस्टोइया पर राज्य करने के लिए फूट और पीसा पर राज्य करने के लिए किलों की आवश्यकता है। इस कारण वे किसी किसी शहर पर सरलता से कब्जा करने के लिए उनमें फूट पैदा कर दिया करते थे। जिन दिनों इटली छिन्न-भिन्न थी उन दिनों अवश्य ही यह नीति ठीक थी, किन्तु आजकल के लिए यह नीति मुझे उचित नहीं जान पड़ती। मेरा विश्वास है कि यदि अब शहरों में इस प्रकार फूट फैला दी जाय तो शत्रु के आते ही वह शहर अवश्य तत्काल शत्रु के हाथ में चला जायगा क्योंकि कमजोर दल शत्रु से मिल जायगा और वलवान् दल अकेले शत्रु का सामना न कर सकेगा। वीनिसवालों ने कदाचित् इन्हीं कारणों से प्रेरित होकर अपने अधीनस्थ शहरों में गुएल्फ और गिवेलिन फिर्कों की फूट को उत्तेजित किया था। यद्यपि वे खूनखरावी की नौवत न आने देते थे तो भी वे उनके झगड़ों को वढ़ाया ही करते थे जिनसे वे लोग आपस के ही झगड़ों म लगे रहें और उनके (वीनिसवालों के) विरुद्ध सिर न उठा सकें। इससे उनको कोई लाभ नहीं हुआ क्योंकि वेला की पराजय के वाद उनकी कुछ प्रजा ने साहस करके उनसे सारे राज्य को छीन लिया। जो राज्य ये झगड़े पैदा या उत्तेजित करता है वह मानों अपने कमजोर होने की दलील पेश कर देता है क्योंकि शक्तिशाली राज्यों में ऐसे झगड़े कदापि नहीं हो सकते। शान्ति के समय में इन झगड़ों से शायद कुछ लाभ हो और प्रजा का प्रबन्ध करने में सरलता पड़े किन्तु लड़ाई के समय इस नीति की

असारता स्पष्ट हो जाती है। जो राजे मुश्किलों का सामना करते हैं वे ही बड़े समझे जाते हैं। नये राजाओं को इस प्रकार मुश्किलों को आसान करने की बड़ी आवश्यकता रहती है और जब उनका भाग्य सीधा होता है तो उन्हें एक न एक ऐसा मौका मिल ही जाया करता है। कुछ लोग समझते हैं कि राजा को अपनी कीर्ति बढ़ाने के लिए कुछ झगड़े पैदा करके उनको दबा देना चाहिए जिससे लोग उसे योग्य समझने लगें। राजा और विशेषकर नये राजाओं को उन लोगों से बहुत सहायता मिली है जिन्हें वे पहले विश्वासपात्र नहीं समझते थे। सैना का राजा पैण्डोल्फो पैट्रुसाह विश्वासपात्र लोगों से तो कम किन्तु संदिग्ध लोगों के द्वारा अधिकांश शासन करता था। इस विषय में मैं अधिक कुछ नहीं कह सकता क्योंकि इसके बारे में कोई एक नियम नहीं बतलाया जा सकता। मैं केवल इतना ही कहूँगा कि यदि उन लोगों को जो नये राज्य के आरम्भ में उसके शत्रु थे, अपनी पद-मर्यादा बनाये रखने के लिए सहायता की आवश्यकता हो तो उनको अपनी ओर मिलाना बहुत सहल है। इनको काम सौंपने से ये लोग अधिक सावधानी से काम करेंगे क्योंकि ये जानते हैं कि उन्हें अपने अच्छे कामों से राजा के पुराने ख्यालों को बदल देना है। अतएव ये लोग उन लोगों की अपेक्षा अच्छा काम करते हैं जो बेखटके रहते हैं। यहाँ पर मैं उस राजा से एक बात और कहूँगा जिसने हाल ही में कोई राज्य जीता है। तुम्हें चाहिए कि तुम इस बात को देख लो कि उस राज्य के जिन निवासियों ने तुम्हारी सहायता की है उनमें से

कितनों ने तुमसे प्रेम करने के कारण और कितनों ने तत्कालीन राजा से असंतुष्ट रहने के कारण तुम्हारा साथ दिया था। जिन लोगों ने असंतोष के कारण तुम्हारा साथ दिया था, उनसे मित्रता बनाये रखना बड़ा कठिन है क्योंकि उनको संतुष्ट करने में तुम्हें बड़ी कठिनता होगी। और प्राचीन तथा अर्वाचीन इतिहास के देखने से पता लगता है कि जो लोग पुराने राज्य से संतुष्ट थे और इस कारण पहले तुम्हारे शत्रु थे, उनकी मित्रता लाभ करना सरल है किन्तु उन लोगों को मित्र बनाये रखना कठिन है जिन्होंने पुराने राजा से असंतुष्ट रहने के कारण तुम्हारा साथ दिया था। राजा लोग अपने शत्रुओं से अपनी रक्षा करने के लिए किले बनाते हैं, जिससे उस पर हमला करनेवालों को भय रहे और सहसा आक्रमण से वह अपना बचाव कर सके। मैं इस उपाय को अच्छा समझता हूँ क्योंकि प्राचीन समय में भी यह उपाय काम में लाया जाता था। तो भी अपने ही समय में हमने निकोलो विटोलो को सिटा डि कास्टिलो के दो किलों को नष्ट करते हुए देखा है। उसने ये किले उस राज्य को अपने कब्जे में कायम रखने के लिए किये थे। सीजर बोर्जिया ने उर्बीनो से वहाँ के ड्यूक को निकाल कर उसका राज्य छीन लिया था। जब यह ड्यूक गिड उबाल्टो वापस लौटा और उसने राज्य पर फिर अधिकार पाया तब उसने उस प्रान्त के कुल किलों को नष्ट करके जमीन से मिला दिया और उसका विचार था कि इनके नष्ट हो जाने से उसका राज्य उसके हाथ से इतनी आसानी से न

निकल सकेगा। जब वैण्टिवोली वोलोग्ना को लौटे तो उन्होंने भी यही किया था। अतएव किलों की उपयोगिता या अनुपयोगिता समय के ऊपर निर्भर है। यदि एक रीति से वे लाभदायक हैं तो दूसरी रीति से उनसे हानि भी है।

इस प्रश्न पर यों भी विचार किया जा सकता है: जो राजा विदेशियों की अपेक्षा अपनी प्रजा से अधिक डरता है उसे किले बनाने चाहिए, किन्तु यदि उसे विदेशी शत्रु से अधिक भय है तो उसे किलों की आवश्यकता नहीं है। मिलन में फ्रांसिस्को स्फोर्जा ने जो किला बनवाया है उससे उसके वंश को जितना कष्ट उठाना पड़ा है और आगे उठाना पड़ेगा उतना और किसी झगड़े से न उठाना पड़ेगा। अतएव सब से मजबूत किला प्रजा का प्रेम है, क्योंकि यदि तुम्हारे पास किले हुए भी और प्रजा तुमसे घृणा करती रही तो ये किले तुम्हारी रक्षा न कर सकेंगे। ज्योंही तुम्हारी प्रजा तुम्हारे विरुद्ध हथियार लेकर खड़ी होगी वैसे ही उन्हें विदेशी सहायकों की कमी नहीं रहेगी। हमारे समय में किलों से किसी भी राजा को लाभ नहीं हुआ। हाँ काउण्टैस फॉर्ली को उससे अवश्य लाभ हुआ था क्योंकि जब उसके पति काउण्ट की मृत्यु हो गई और जनता ने विद्रोह कर दिया तो उसने किले में जाकर शरण ली और जब तक मिलन से सहायता न आई तब तक वह उसी में रही। उस समय की अवस्था ऐसी थी कि विदेशी लोग प्रजा की सहायता न कर सकते थे। किन्तु जब सीजर वोर्जिया ने उस पर हमला किया तो किलों से उसका बचाव नहीं हुआ

क्योंकि जनता उसके विरुद्ध थी और वह सीजर बोर्जिया से मिल गई। अतएव उस समय भी और उसके पहले उसके लिए बेहतर यह होता कि उसके पास एक भी किला न रह जाता किन्तु प्रजा का प्रेम उसे प्राप्त हो जाता। इन बातों पर ध्यान रख के मैं किले बनानेवालों और न बनानेवालों दोनों ही की तारीफ करूँगा किन्तु मैं उसको मूर्ख समझूँगा जो इन किलों पर भरोसा करके प्रजा के प्रेम की पर्वाह नहीं करते।

इक्कीसवाँ अध्याय

कीर्ति प्राप्त करने के लिए राजा को क्या करना चाहिए ?

राजा की सबसे अधिक कीर्ति उस समय बढ़ती है जब वह कोई बड़े साहस या महत्त्व का काम करता है। इस समय स्पेन का राजा फर्डिनएड बड़ा मशहूर है। प्राचीन होने पर भी उसे एक प्रकार से नया राजा ही समझना चाहिए क्योंकि छोटे से राजा से बढ़कर वह आज कल ईसाई संसार का सबसे बड़ा बादशाह हो गया है और उसके बहुत से काम सचमुच बड़े महत्त्वपूर्ण और विचित्र हैं। अपने शासन के आरम्भ में उसने ग्रैनाडा पर आक्रमण किया था और यही आक्रमण उसकी उन्नति का आरम्भ था। पहले तो वह आक्रमण धीरे-धीरे करता रहा और उसने कास्टाइल के सर्दारों को इस काम में इतना लगा दिया कि वे और सब बातें भूल गये। इससे लोग समझने लगे कि वे सर्दार फर्डिनएड के अधिकार में हैं। और सर्दारों को उसकी इस ख्याति का गुमान भी न हुआ। ग्रैनाडा की लड़ाई के लिए उसे चर्च और जनता से रुपये की सहायता मिलती थी। उस रुपये से वह अपनी सेना बढ़ाता था और आगे चल कर इसी सैनिक शक्ति के कारण उसकी और भी अधिक प्रसिद्धि हुई। इसके सिवाय

रुपये के लिए वह धर्म के नाम पर एक और अत्याचार करता था अर्थात् मुअरों (मुसलमानों) को अपने राज्य से निकाल कर उनका धन अपहरण कर लेता था। इससे बढ़ कर अच्छा और कोई उदाहरण नहीं मिल सकता। इसी बहाने उसने अफ्रीका पर धावा कर दिया, इसी धर्म के नाम पर उसने इटली में अपना पैर फैलाया और इसी बहाने फ्रांस में घुस रहा है। इस प्रकार वह बराबर बड़े-बड़े काम करता रहा है जिनसे उसकी प्रजा आश्चर्य-चकित होकर उसकी कार्रवाइयों के नतीजों को देखने के लिए उत्सुक हो जाती है।

और ये सब काम एक के बाद दूसरे इस प्रकार तर ऊपर हो रहे हैं कि लोगों को सोचने और उसके विरुद्ध कार्रवाई करने का मौका ही नहीं मिलता। राजा के लिए यह भी आवश्यक है कि वह राज्य के आन्तरिक शासन में कोई ऐसा काम कर दे जिससे लोगों में कुछ दिनों उस बात की खूब चर्चा रहे। मिलन के बर्नेबो का हाल लिखा ही जा चुका है। उसे जैसे ही किसी मनुष्य का कोई काम असाधारण मालूम पड़ता वह तत्काल उसे इनाम या सजा देता जिससे कुछ दिनों तक लोगों में उसके काम की चर्चा बनी रहती। और राजा को सबसे अधिक ध्यान इस बात का रखना चाहिए कि उसकी नेकनामी हो और लोग उसे महान् और बहुत अच्छा समझें। इसके सिवाय वह राजा अच्छा समझा जाता है जो सच्चा दोस्त या सच्चा दुश्मन होता है और खुल्लमखुल्ला अपनी शत्रुता या मित्रता प्रकट कर देता है।

यह नीति उदासीन रहने की अपेक्षा सदैव अच्छी है। क्योंकि यदि तुम्हारे दो ऐसे पड़ोसी-राज्य आपस में लड़ जायँ कि उनमें से एक के जीतने से तुम्हें भय हो और दूसरे के जीतने से भय न हो तो इन दोनों हालतों में तुम्हारे लिए श्रेयस्कर यही है कि तुम खुल कर अपना पक्ष कह दो और लड़ाई लड़ना शुरू कर दो, क्योंकि तुम्हारा शत्रु जीता और तुम न लड़े तो वह जीतने पर तुम्हें दबा लेगा और जो हार गया है वह तुम्हारी इस दुर्दशा को देख कर मन ही मन प्रसन्न होगा; तथा अन्त में तुम्हारा कोई भी साथी न रह जायगा क्योंकि जेता तो उस आदमी से मित्रता न करेगा जिसकी मित्रता में उसे संदेह है और जिसने विपत्ति के समय उसका साथ नहीं दिया है और हारा हुआ व्यक्ति तो तुम्हारा साथ देगा ही नहीं क्योंकि उसके गाढ़े समय में तुमने उसका साथ नहीं दिया था। ईरोली ने एण्टिओकस को ग्रीस में रोमन लोगों को निकाल बाहर करने के लिए भेजा था। उसने एशियाई लोगों के पास—जो रोमन लोगों के मित्र थे—व्याख्यान-दाता भेजे और उनसे उदासीन रहने के लिए प्रार्थना कराई। किन्तु रोमन लोगों ने उनको लड़ाई में साथ देने के लिए उकसाया। अन्त में यह विषय एकियाई की कौंसिल के सामने पेश हुआ और वहाँ एण्टिओकस के दूत ने उनसे उदासीन रहने की प्रार्थना की। इसके उत्तर में रोमन दूत ने कहा—"आप लोगों से कहा गया है कि आप हमारे इस युद्ध में न पड़ें। यह बात कदापि ठीक नहीं है। क्योंकि यदि आप इस लड़ाई में शामिल न होंगे तो जो कोई

भी पक्ष इसमें जीतेगा, आपको उसके अधीन हो जाना पड़ेगा।" और अधिकतर वे लोग जो तुम्हारे मित्र नहीं हैं, तुम्हें उदासीन रहने की सलाह देंगे। और तुम्हारे शुभचिन्तक तुमसे एक पक्ष में खड़े होकर लड़ने का अनुरोध करेंगे। जिन राजाओं में दृढ़ विचार नहीं है वे लड़ाई के समय साधारणतः उदासीन हो जाते हैं और अपना सर्वनाश कर बैठते हैं। किन्तु जब कोई राजा स्पष्ट रूप से एक पक्ष ग्रहण कर लेता है और चाहे वह बड़ा शक्तिशाली ही क्यों न हो और तुम उसके पंजे ही में क्यों न पड़ जाओ, फिर भी तुम्हारी उसकी मित्रता हो चुकी है और वह तुम्हारा उपकार करने को बाध्य है। और कोई भी आदमी ऐसा कृतघ्न न होगा कि इस अवस्था में भी तुम्हें सताने की हिम्मत करे।

फिर, चाहे जितनी बड़ी जीत क्यों न हो, विजयी राजा को हमेशा न्याय और अन्याय का कुछ न कुछ ध्यान रखना ही है। किन्तु जिसका तुमने साथ दिया है यदि वह हार भी जाय तो वह अपना यह कर्तव्य समझता है कि तुम्हारी रक्षा करे और [illegible] वह तुम्हारी सहायता करेगा। सम्भव है कि वह फिर जीत जाय और उसका सितारा फिर बुलन्द हो जाय—तुम फिर भी उसके साथ रहोगे। इसके विपरीत यदि दोनों लड़नेवाले ऐसे हैं कि उनमें से किसी की भी जीत से तुम्हें कोई भय नहीं हो सकता, फिर भी बुद्धिमानी इसी में है कि तुम एक का साथ दो, क्योंकि तुम एक ऐसे को नष्ट करने जा रहे हो और उस आदमी की सहायता ले रहे हो, जिससे वास्तव में उस एक की रक्षा होनी चाहिए थी;

अब यदि वह जीत जाय तो इस हालत में भी वह तुम्हारी मर्जी के ऊपर है और यह सम्भव नहीं कि तुम्हारी सहायता पाकर भी वह न जीते। यहाँ पर यह बात भी ध्यान में रखे कि किसी भी राजा को, जब तक वह मजबूर न हो जाय, किसी दूसरे राजा को नष्ट करने के लिए अपने से अधिक शक्तिशाली राजा का साथ न देना चाहिए, क्योंकि यदि वह जीतता है तो तुम उसकी मर्जी पर हो और राजाओं को चाहिए कि जहाँ तक हो सके दूसरों की मर्जी पर अपने को कभी न छोड़ें। वीनिसवालों ने मिलन के ड्यूक के विरुद्ध फ्रांस से मित्रता की। यदि वे चाहते तो अपने से अधिक शक्तिशाली फ़्रांस का साथ बचा सकते थे। किन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया और परिणाम यह हुआ कि अन्त में उनका भी नाश हो गया। किन्तु यदि राजा को अपने से अधिक शक्तिशाली का साथ देना आवश्यक हो जाय—जैसे फ़्लौरेंस वालों को लम्बार्डी के ऊपर आक्रमण करने में स्पेन और पोप का मजबूरन साथ देना पड़ा था—तो दूसरी बात है। कोई राजा यह न समझे कि सदा एक प्रकार की नीति का अनुसरण करने में लाभ होता है। उसे ध्यान रखना चाहिए कि हर एक नीति समझ-बूझकर काम में लानी उचित है। अनुभव से मालूम पड़ता है कि एक कठिनाई को बचाने से दूसरी कठिनाई का सामना करना पड़ता है किन्तु बुद्धिमान् लोग सोच समझकर सबसे कम हानिकारक कठिनाई का सामना करते हैं। राजा को यह भी चाहिए कि वह गुणियों का आदर करे और ललित-कला से प्रेम रखे। इसके सिवाय उसे

चाहिए कि वह अपनी प्रजा को शान्ति-पूर्वक व्यापार, खेती या अन्य मनमाने काम करने को उत्तेजित करे, उन्हें यह भय न हो जाय कि यदि हम अमुक व्यापार करने लगें तो हम पर टैक्स लग जायगा। राजा को चाहिए कि वह इन लोगों को—और उन आदमियों को जो उसके नगर या राज्य की उन्नति करें—उचित पुरस्कार दे। इसके अलावा उसे यह भी चाहिए कि साल में समय-समय पर उत्सव आदि करके अपनी प्रजा का चित्त उनमें लगाये रहे। हर एक नगर में व्यापारी या भिन्न भिन्न श्रेणी के लोग रहते हैं—राजा को चाहिए कि समय-समय पर वह उन सबसे मिलता रहे, उनके साथ उदारता और दयापूर्वक व्यवहार करे, किन्तु उसे इस बात का सदा ध्यान रहे कि उनकी शान-शौकत में किसी भी प्रकार का बल न आने पावे।

बाईसवाँ अध्याय

राजा के मन्त्रियों के विषय में

मन्त्रियों का चुनाव बड़े महत्त्व का विषय है क्योंकि उनका अच्छा या बुरा होना राजा की बुद्धिमानी पर निर्भर है। बाहरी आदमी राजा को उसके नौकरों के बर्ताव और कामों के कारण अच्छा या बुरा समझने लगते हैं। यदि ये लोग चतुर और स्वामि-भक्त हुए तो लोग उसे बुद्धिमान् मान लेते हैं क्योंकि उसने उन लोगों की योग्यता को परख कर अपने वशीभूत कर लिया है। किन्तु यदि उसके नौकर मूर्ख हुए तो बाहरी लोग राजा को फौरन अयोग्य समझ जाते हैं क्योंकि उसने उनके चुनने में भूल की है। जो कोई आदमी अण्टोनियो डे वेनाफ्रो को देखता था वही सीना के राजा पैण्डाल्फो पैट्रूशी की प्रशंसा करता था क्योंकि उसने इतना अच्छा मन्त्री चुना था। संसार में तीन तरह के मस्तिष्क होते हैं: एक तो वे जो बिना किसी दूसरे की सहायता के सब बातें समझ लेते हैं, दूसरे वे जो औरों के समझाने से समझ जाते हैं और तीसरे वे जिनके दिमाग़ में किसी तरह की बात नहीं धँसती। पहले और दूसरे प्रकार के लोग ठीक होते हैं किन्तु तीसरे तो बिलकुल बेकार हैं। इससे स्पष्ट है कि पैण्डाल्फो यदि पहली किस्म का न था तो दूसरी किस्म का अवश्य ही था क्योंकि जब

किसी आदमी के सामने कोई बात पेश की जाती है तो चाहे उसमें मौलिकता न भी हो, वह उसकी भलाई-बुराई को समझ सकता है और वह अपने मन्त्री की बुराइयों और भलाइयों को समझकर बुराइयों को दूर कर देता है तथा भलाइयों का समर्थन करता है। मन्त्री की परीक्षा के लिए सर्वोत्कृष्ट उपाय यह है कि जो मन्त्री तुम्हारे स्वार्थ की अपेक्षा अपने स्वार्थ का अधिक ध्यान रखता है वह कभी विश्वास करने योग्य नहीं है क्योंकि जो आदमी दूसरे का नौकर है उसे चाहिए कि वह अपने स्वामी की भलाई का ही सबसे पहले ध्यान रखे। इसके साथ राजा को भी यह उचित है कि वह अपने मन्त्री का ध्यान रखे, जिससे वह स्वामि-भक्त और कर्तव्यपरायण बना रहे। इसके लिए वह मन्त्री को धन दे, उसका आदर करे, उसके साथ दया का बर्ताव करे, उसे बड़ी-बड़ी उपाधियाँ दे और उस पर जिम्मेदारी के काम छोड़ दे। इस धन और इन उपाधियों के मिलने से वह दूसरी उपाधियों की इच्छा नहीं करेगा और उसे जो बड़े-बड़े काम करने को मिले हैं उनके कारण वह राजा का परिवर्तन न चाहेगा क्योंकि वह जानता है कि बिना इस राजा की सहायता के वह इन कामों को पूरा नहीं कर सकता। जब राजा और उसके मन्त्री में यह भाव आ जाता है तब दोनों एक दूसरे का विश्वास करने लगते हैं और यदि उनमें यह भाव न हुआ तो दो में से एक या दोनों को [illegible] में हानि उठानी पड़ती है।

तेईसवाँ अध्याय

खुशामद से किस तरह दूर रहे

मैं एक बात के बारे में चुप नहीं रह सकता और वह बात ऐसी है कि जब तक राजा बड़ा बुद्धिमान् या चतुर न हो तब तक उसका उस गलती से बचना कठिन है। मेरा मतलब खुशामदियों से है। सारे दर्बारों में इनकी भरमार है। इसका कारण यह है कि मनुष्य-प्रकृति कुछ ऐसी कमजोर होती है और उसे अपने कामों की प्रशंसा सुनने में इतना आनन्द आता है कि इस प्लेग से बचना बड़ा कठिन है। और जो लोग इससे बचने की कोशिश करते हैं वे बहुधा हिकारत की नजर से देखे जाते हैं। ख़ुशामद से बचने का केवल यही उपाय है कि लोगों को विश्वास हो जाय कि तुम सच बात पसन्द करते हो और सच बात कहने से तुम बुरा नहीं मानते। किन्तु यदि हर एक आदमी तुमसे सच बात कहने की हिम्मत करने लगे तो इसके मतलब यह हुए कि उनकी निगाह से तुम्हारी इज्जत जाती रही और उन्हें तुम्हारा डर नहीं रह गया। अतएव बुद्धिमान् राजा को एक तीसरा उपाय करना चाहिए। उसे चाहिए कि वह केवल कुछ थोड़े से, चुने हुए बुद्धिमान् लोगों को सच बात कहने की स्वतन्त्रता दे दे, लेकिन उन्हें भी यह समझा दे कि जिस विषय में उनसे सम्मति न माँगी जाय उस विषय में वे अपनी राय न दें।

किन्तु उसे चाहिए कि वह उनसे सब बातें पूछा करे और उनकी राय लिया करे। और फिर स्वयं अपने ढंग पर उन पर विचार करे और इन लोगों से वह इस तरह का वर्ताव करे कि उन्हें विश्वास हो जाय कि वे जितनी अधिक आजादी से बोलेंगे उतनी ही अधिक उनकी इज्जत होगी। इन लोगों के सिवाय उसे दूसरों की बातें न सुननी चाहिए और जो कुछ वह निश्चय करे, उस पर दृढ़ रहे। जो लोग इसके विपरीत जल्दबाजी से खुशामद के कारण या बहुतों की सम्मति लेने के कारण अपना मत बार-बार बदला करते हैं, उनकी इज्जत लोगों की निगाहों में बिल्कुल गिर जाती है। इस बात का मैं एक ताजा उदाहरण देता हूँ। वर्तमान सम्राट् मैक्सिमिलि-अन के विषय में उसके एक अनुयायी प्रे लूका ने यह कहा है कि सम्राट् किसी से भी राय नहीं लेते, फिर भी उन्होंने आज तक कोई काम अपनी मर्जी के मुताबिक नहीं किया। इसका कारण यह है कि वे उपर्युक्त नियमों के विपरीत चलते हैं। सम्राट् अपनी बातें गुप्त रखते हैं अतएव जब तक वे कोई कार्रवाई शुरू नहीं करते तब तक लोगों को उसका हाल नहीं मालूम होता और जब कार्रवाई शुरू होती है तो उनके साथ रहनेवाले उसका विरोध करने लग जाते हैं और वे लोग सरलता से सम्राट् को अपने पुराने इरादे से हटा देते हैं। इसका परिणाम यह है कि वे जो काम आज करते हैं, उसे दूसरे दिन उलट देते हैं। किसी भी आदमी को यह नहीं मालूम कि उनका क्या करने का इरादा है या वे क्या करना चाहते हैं और कोई भी आदमी उनके विचारों पर भरोसा नहीं करता। इसलि

राजा को सलाह तो अवश्य लेनी चाहिए किन्तु सलाह वह अपनी इच्छा से ले, दूसरों की इच्छा से न ले। उसे चाहिए कि जो लोग बिना माँगे उसे सलाह देने का उद्योग करें उन्हें बिल्कुल ही निरुत्साहित कर दे। किन्तु जब वह सलाह माँगे तो उसे चाहिए कि वह बड़ी सावधानी से सच्ची बातों को सुने। यदि उसे मालूम हो कि कोई आदमी सच बात छिपाता है तो उसे उस पर नाराज होना चाहिए। और जो लोग यह समझते हैं कि राजा स्वयं बुद्धिमान् नहीं होते किन्तु वे बुद्धिमान् मंत्री के कारण बुद्धिमान् समझे जाते हैं, वे बड़ी भूल करते हैं। यह एक अकाट्य नियम है कि जो राजा स्वयं बुद्धिमान् नहीं है उसे अच्छी सलाह से कोई लाभ नहीं हो सकता। ऐसा तभी होता है जब कोई राजा अपने आपको किसी बुद्धिमान् मंत्री के हाथ में बिल्कुल सौंप देता है और अपने मंत्री के कहने को कभी नहीं टालता। इस अवस्था में वह आदमी उस पर अच्छी तरह शासन करेगा, किन्तु इस शासन के कारण थोड़े ही दिनों में वह उसका राज्य हड़प कर लेगा। किन्तु यदि राजा बुद्धिमान् न हुआ और उसने बहुत से आदमियों से सलाह ली और उनकी सलाह अलग-अलग हुई—जैसा कि होना अवश्यम्भावी है—तो वह यह निश्चय न कर सकेगा कि किस सलाह पर अमल किया जाय। सब सलाहगीर अपने अपने फ़ायदे की बातें बतलायेंगे और मूर्ख राजा उनके मतलब को न ताड़ सकेगा। और मनुष्यों का यह स्वभाव है कि जब तक उन्हें स्वामिभक्त होने के लिए मजबूर नहीं किया जाता तब तक वे दग़ाबाज ही बने रहते हैं।

अतएव इससे स्पष्ट है कि अच्छी सलाह राजा को तभी मिलती है जब वह स्वयं बुद्धिमान् होता है। यदि वह बुद्धिमान् न हुआ तो उसे अच्छी सलाह नहीं मिल सकती।

चौबीसवाँ अध्याय

इटली के राजाओं के राज्य क्यों जाते रहे ?

उपर्युक्त बातों के अनुसार सावधानी के साथ काम करने से नये राजा की जड़ अच्छी तरह जम जाती है और वह पुराने राजा से भी अधिक शक्तिशाली मालूम पड़ने लगता है। इसका कारण यह है कि लोग नये राजा के कामों को पुराने राजा के कामों की अपेक्षा अधिक ध्यान से देखते हैं और यदि उसके काम उन्हें अच्छे जान पड़ते हैं तो वे उसे वंशपरम्परागत राजाओं से अधिक मानने लगते हैं और उसके प्रति पुराने राजा की तरह ही राजभक्त हो जाते हैं। क्योंकि लोगों पर पिछले समय के कामों की अपेक्षा वर्तमान समय के कामों का ही अधिक असर पड़ता है और जब वे वर्तमान समय में अपने आपको सुखी समझने लगते हैं तो वे उस आराम के कारण पिछली बातों को भूल जाते हैं और उनका जिक्र नहीं करते, और ऐसी हालत में यदि राजा में स्वयं कोई दोष न हुआ तो वे उसकी रक्षा करने का पूरा-पूरा उद्योग करते हैं। इस प्रकार नये राजा को इस बात का और गर्व होगा कि मैंने एक नये राज्य की स्थापना ही नहीं की किन्तु मैंने उसमें अच्छे कानून प्रचलित किये हैं, उसको ताकतवर बनाया है, वहाँ मैंने विश्वासपात्र मित्र बनाये हैं और अन्य अनुकरणीय काम किये हैं, और इसी

प्रकार जो व्यक्ति राजा के घर में पैदा होकर अपना राज्य अपनी मूर्खता से खो दे उसे दुगनी शर्म आवेगी।

और जब हम इटली के ऐसे राजाओं जैसे नेपल्स के राजा, मिलन के ड्यूक आदि का विचार करते हैं, जिनके राज्य उनसे छिन गये हैं तो हमें उन सबमें एक समान दोष मालूम पड़ता है— अर्थात् उन सब की सेनाएँ कमज़ोर थीं और सेना के कमज़ोर होने के कारणों का हम पिछले अध्यायों में अच्छी तरह वर्णन कर चुके हैं। इस सर्वव्यापी दोष के सिवाय किसी किसी राजा की प्रजा उनके विरुद्ध थी, यदि प्रजा विरुद्ध न थी तो अमीर और सर्दार विश्वासपात्र न थे। जिस राज्य में प्रजा सन्तुष्ट, सर्दार विश्वासपात्र और सेना मजबूत होती है, वह राज्य छीना नहीं जा सकता। मैसेडोनिया का राजा फ़िलिप (सिकन्दर का पिता नहीं बल्कि वह जिसे

बात पर कभी विचार न किया था कि यदि अवस्था बिगड़ जाय तो हमारी क्या हालत होगी। जो साधारण लोग साधारण सुहावने दिनों को देख कर आँधी-तूफान से अपना बचाव करने का ख्याल नहीं करते उन्हें पीछे पछताना पड़ता है, उसी प्रकार इन राजाओं पर जब विपत्ति पड़ी तो उन्हें अपनी रक्षा करने की हिम्मत तो न हुई, किन्तु वे मैदान से भाग गये। वे यह आशा करते थे कि उनकी प्रजा विजयी शत्रु के अत्याचारों से घबड़ा कर उन्हें वापस बुला लेगी। यदि और कोई दूसरा उपाय न चल सके तो यह उपाय ही अच्छा है, किन्तु इस उपाय के भरोसे रह कर अपनी रक्षा के दूसरे उपायों का विचार न करना बहुत बुरा है क्योंकि कोई आदमी इस आशा से गिरने की इच्छा न करेगा कि कोई दूसरा मुझे उठा ले। दूसरे लोगों की मदद का क्या भरोसा है। वे मदद करें तो अच्छा है और न करें तो उनको मदद के लिए कौन मजबूर कर सकता है। और यदि दूसरों की सहायता मिलने की पूर्ण आशा होवे भी, तो उस अवस्था में भी तुम्हें उनका भरोसा करके चुप न बैठना चाहिए क्योंकि दूसरे लोगों की सहायता पर निर्भर रहना कायरता समझी जाती है। वे ही रक्षा के उपाय टिकाऊ और अच्छे होते हैं जो तुम्हारी योग्यता और तुम्हारे बल पर निर्भर हैं।

पचीसवाँ अध्याय

सांसारिक मामलों में भाग्य का कितना हिस्सा है और दुर्भाग्य की रोक किस तरह की जा सकती है ?

मुझे यह बात मालूम है कि संसार में ऐसे बहुत से आदमी हैं, जिनकी यह राय है कि सांसारिक मामलों में भाग्य और ईश्वर का इतना हाथ है कि उनका बदलना मनुष्य के लिए असम्भव है। वे कहते हैं कि इस कारण भाग्य का विरोध करना या उसके टालने का उपाय करना व्यर्थ है, और इसे चाहिए कि संसार के कामों को अपनी गति के अनुसार ही चलने दें। इन दिनों में ऐसे बड़े-बड़े उलट-फेर हो रहे हैं जिनको मनुष्यों ने कभी स्वप्न में

दूसरी जगह बैठा देती है। सब लोग उसके भय के मारे भागने लगते हैं और कोई भी व्यक्ति उसके इस रोष का सामना नहीं कर सकता। पर जिन दिनों वह शान्त रहती है उन दिनों लोग उसकी बाढ़ से बचने के लिए बाँध बाँध सकते हैं, उसके पानी के निकास का रास्ता बना सकते हैं जिससे जब उसमें बाढ़ आवे तब उसका पानी या तो नहरों में चला जाय, या रुक जाय और उसकी भयंकरता कम हो जाय। यही हाल भाग्य का है। जो लोग उससे बचने का उपाय पहले से नहीं करते उन्हें वह नष्ट कर देता है। और जब तुम इटली की अवस्था पर विचार करोगे तो तुम्हें मालूम होगा कि उसने अपनी रक्षा के कुछ भी उपाय नहीं किये हैं। यदि इटली में भी स्पेन, फ्रांस और जर्मनी की तरह पहले से उपाय किये जाते तो उसमें या तो भाग्य का यह प्रकोप होता ही नहीं और यदि होता भी तो उससे इतने उलट-फेर कदापि न होते। भाग्य का विरोध करने के लिए यह तर्क बहुत काफी है। अब मैं विशेष उदाहरणों द्वारा यह दिखलाऊँगा कि किसी किसी राजा का भाग्य-परिवर्तन किस प्रकार हो जाता है। इसका मुख्य कारण यह है कि ये राजे अपने आप को भाग्य के अधीन कर देते हैं और जब भाग्य इनके विपरीत होता है तो वह इन्हें नष्ट कर देता है। मेरा यह भी विश्वास है कि जो लोग समय की आवश्यकता के अनुसार अपनी नीति बदल लिया करते हैं वे बड़े सुखी रहते हैं और इसके विपरीत जो समयानुसार अपनी नीति नहीं बदलते उन्हें बड़ा कष्ट उठाना पड़ता है। हम नित्य प्रति यह देखते हैं कि भिन्न भिन्न

आदमी एक ही उद्देश्य अर्थात् धन और कीर्ति को अपने सामने रखते हैं और उनको पाने का प्रयत्न करते हैं। किन्तु उनके उपाय एक ही नहीं होते। कोई सावधानी से, कोई जोर-जबर्दस्ती से, कोई चालबाजी से, कोई धैर्य से, और कोई जल्दबाजी से, उस एक ही उद्देश्य को प्राप्त कर लेते हैं। कारण यह है कि हर एक आदमी को समय और अवस्था के अनुसार अपने कार्य-साधन का उपाय बदलना पड़ता है। इसी तरह जब कभी हम सावधानी के साथ काम करनेवाले दो आदमियों को देखते हैं, तो उनमें से एक अपने काम में सफल हो जाता है किन्तु दूसरे को सफलता प्राप्त नहीं होती और फिर दो आदमी बिल्कुल विभिन्न उपायों के द्वारा अपना कार्य सिद्ध कर लेते हैं। इसका कारण समय की अवस्था है। किसी समय एक उपाय सफल होता है। किसी समय वही उपाय बेकार हो जाता है। समय के इस परिवर्तन से [illegible]

एक पुराना उपाय नहीं छोड़ सकता या वह एक ही रास्ते में चल कर सदा सफल होता आया है और अब उसे वह रास्ता छोड़ने का साहस नहीं होता। अतएव सावधान आदमी को जब सहसा कोई काम करना पड़ता है तो उसे कोई उपाय समझ में नहीं आता और अन्त में वह विगड़ जाता है। यदि कोई आदमी समझ और अवस्था के अनुसार ही अपना उपाय भी वदलता रहे तो भाग्य उसका साथ कभी न छोड़ेगा। पोप जूलियस द्वितीय सदा सामयिक उत्तेजना से प्रेरित होकर काम किया करता था और उसके उपाय समय और अवस्था से इतने उपयुक्त होते थे कि उसे कभी असफलता नहीं हुई। उस लड़ाई का ध्यान कीजिए जो उसने वोलोग्ना से गियोवानी वैण्टिवोग्ली के समय में लड़ी थी। वीनिसवाले, स्पेन का राजा, फ्रांस सभी इस युद्ध के विरुद्ध थे; किन्तु इसकी पर्वाह न करके वह स्वयं युद्ध में गया। उसकी इस कार्रवाई से स्पेन और वीनिस दोनों सहम कर चुप हो गये। वीनिसवाले तो डर गये और स्पेन इस आशा से चुपका हो रहा कि मुझे नेपल्स का राज्य फिर मिल जायगा। किन्तु पोप ने फ्रांस के राजा से सहायता ली और उसने सहायता की भी, क्योंकि वह पोप की इस चाल से घवड़ा गया और वह वीनिसवालों को हराना चाहता था। इस प्रकार जूलियस ने ताव में आकर वह काम कर डाला जो किसी भी पोप से—वह चाहे जितना सावधान या बुद्धिमान् क्यों न होता—नहीं हो सकता था। यदि वह और पोपों की तरह कुल प्रवन्ध और समझौता करने की राह

देखता तो उसे आक्रमण करने का कभी मौका न मिलता, क्योंकि फ्रांस का राजा हजारों बहाने बना देता और दूसरे लोग उसे सैकड़ों भय दिखलाते। मैं उसकी दूसरी कार्यवाइयों का जिक्र नहीं करूँगा। हाँ, यदि वह बहुत दिनों जीता रहता तो अवश्य ही उसका नाश हो जाता क्योंकि सावधानी और बुद्धिमानी के साथ काम करने का मौका आता तब उससे वह हो न सकता और वह नष्ट हो जाता। अतएव मैं यह निष्कर्ष निकालता हूँ कि समय तो बदलता रहता है किन्तु मनुष्य के उपाय नहीं बदलते और जब तक दोनों एक दूसरे के अनुकूल रहते हैं तब तक आदमी सफल होता रहता है, किन्तु जब एक दूसरे के प्रतिकूल हो जाते हैं तब उस आदमी को असफलता हो जाती है। मेरा तो यह विश्वास है कि सावधानी की अपेक्षा उतावली से काम करने से अधिक

छब्बीसवाँ अध्याय

बर्बर लोगों से इटली को स्वतन्त्र करने के लिए उत्तेजनात्मक निवेदन

जो जो बातें मैं कह चुका हूँ उनपर विचार कर चुकने पर और इस बात को भी सोच कर कि इस समय इटली में एक नये राजा के अभ्युदय के लिए शुभ अवसर है या नहीं और इस बात का भी ध्यान रखकर कि इस समय यदि कोई योग्य और समझदार व्यक्ति खड़ा हो जाय तो वह अपने लिए गौरव का और जनता के लाभ का काम कर सकता है या नहीं—मैंने यह निचोड़ निकाला है कि इस काम के लिए इससे बढ़कर दूसरा अवसर मिलना दुर्लभ है। जिस प्रकार मानो मूसा की शक्ति दिखलाने के लिए ही मिश्र के लोगों को ईश्वर ने दासता में जकड़ दिया था, जिस प्रकार साइरिस की महत्ता और साहस को प्रमाणित करने के लिए ही मानो मीड्स फारसवालों पर अत्याचार कर रहा था और जिस प्रकार थीसियस के महत्त्व को प्रकाशित करने के लिए एथेन्सवाले तितर बितर हो रहे थे उसी प्रकार किसी इटालियन महापुरुष की योग्यता संसार के सामने प्रमाणित करने के उद्देश्य ही से इटली की यह वर्तमान दुर्दशा हो रही है। वह यहूदियों से भी अधिक दासत्व की जंजीरों से जकड़ी है, फारसवालों से भी अधिक अत्या-

चार से पीड़ित है और एथीनियन लोगों से भी अधिक कलह से जीर्ण शीर्ण हो रही है। मानो इसी लिए आज वह नेता के बिना, व्यवस्था-हीन, पराजित, नष्ट भ्रष्ट, पीड़ित, दुर्दशाग्रस्त होकर प्रत्येक प्रकार के नाश का शिकार बनी हुई है। और यद्यपि आज के पहले एक ऐसी आत्मा दिखलाई पड़ी थी जिससे यह आशा होने लगी थी कि ईश्वर ने उसे इटली को मुक्त करने के लिए भेजा है तथापि अपने कार्य की चरम सीमा पर पहुँचते पहुँचते दुर्भाग्यवश वह नष्ट हो गया और आज इटली फिर मृतप्राय होकर ऐसे महान् व्यक्ति की प्रतीक्षा कर रही है जो उसके घावों को

आश्चर्यजनक और विरले ही थे तो भी वे थे तो आखिरकार आदमी ही और उन्हें आपके समान अवसर नहीं था। क्योंकि उनका उद्देश्य इस उद्देश्य से अधिक न्याय-संगत न था; न उनको इतनी सरलता थी और न उनके ऊपर ईश्वर ही का इतना अनुग्रह था जितना आपके ऊपर है। यहाँ इस समय एक पवित्र और न्यायसङ्गत कारण है क्योंकि वही युद्ध न्याय-सङ्गत है जो आवश्यक है, और वे ही शस्त्र करुणापूर्ण हैं जिनको छोड़ और किसी से मुक्ति की आशा नहीं है। यहाँ लोग राजी हैं और जहाँ रज़ामन्दी है वहाँ कठिनाई भी नहीं हो सकती यदि आप उन लोगों के उदाहरण के अनुसार चलें जिनका जिक्र मैंने किया है। इन बातों के सिवाय ईश्वर ने यहाँ अपूर्व कौतुक दिखलाये हैं। समुद्र खुल गया है, एक बादल ने आपको रास्ता दिखलाया है, चट्टान से जल निकला है, अमृत की वर्षा हुई है और सभी ने आपके महत्त्व का उपाय किया है। अब बचा हुआ उद्योग करना आपका काम है। ईश्वर सब काम नहीं कर देगा क्योंकि वह हमारी स्वतन्त्र इच्छा और हमारी कीर्ति को अपहरण नहीं करना चाहता। इसमें कुछ आश्चर्य करने का कारण नहीं है कि उपर्युक्त इटालियन वह काम नहीं कर सके जिनकी हमें आपके कीर्त्तिवान् वंश से आशा है। और यदि इतने विद्रोहों और लड़ाइयों में असफलता हुई है तो उसका कारण यह नहीं है कि हम लोगों में सैनिक योग्यता ही नहीं रह गई, बल्कि इसका कारण यह है कि पुराने तरीके अच्छे नहीं थे और अभी तक हमने नये तरीकों को नहीं ढूँढ़ा है। जिस पुरुष का नवीन

अभ्युदय होता है उसका सबसे अधिक यश नये कानूनों और बातों के चलाने से फैलता है। यदि ये कानून और बातें लाभदायक और महत्त्वपूर्ण हुईं तो लोग उसकी बड़ाई करने लगते और उससे स्नेह करने लगते हैं। इस समय इटली में नई बातें फैलाने के अवसरों की कोई कमी नहीं है। यहाँ यदि नेता में करतब करने की शक्ति हो तो सदस्यों में शक्ति की कमी नहीं है। देखिए ड्यु-एल में और छोटी छोटी समितियों में इटलीवाले शक्ति, कुश-लता और बुद्धिमानी में किसी से कम प्रमाणित नहीं होते किन्तु जब फ़ौजों का काम आ पड़ता है तब उनकी बुरी हालत हो जाती है और इस दुर्दशा का केवल कारण नेताओं की कमजोरी है क्योंकि जो युद्ध के तत्त्व समझते हैं वे आज्ञाकारी नहीं हैं और सभी लोग अपने को बुद्धिमान् लगाते हैं। अभी तक कोई ऐसा महान् व्यक्ति उत्पन्न नहीं हुआ जो अपनी बहादुरी और भाग्य के कारण इतना बढ़ गया हो कि दूसरों को अपनी आज्ञा मानने को बाधित कर सके। अतएव पिछले बीस वर्षों में यह अवस्था हो गई है कि जहाँ कहीं निरी इटालियन सेना रही है वहीं वह हारी है। टारो, सिकन्दरिया, केपुआ, जिनोआ, वाइला, बोलोग्ना और मेस्त्री के युद्धों को देखिए—सभी जगह निरी इटालियन सेना थी और सभी जगह उसकी पराजय हुई। अतएव यदि आपका प्रसिद्ध घराना उन महान् व्यक्तियों का अनुकरण करना चाहता है जिन्होंने अपने देश को गुलामी से छुड़ाया था तो सबसे पहले आपको अपनी सेना रखनी पड़ेगी क्योंकि आपको उससे अधिक स्वामिभक्त, अधिक सच्चे या

अच्छे सिपाही कहीं नहीं मिलेंगे। और अलग अलग ये सिपाही चाहे अच्छे ही क्यों न हों, किन्तु जब आप उनका परिचालन करेंगे, उनको सम्मान और सहायता देंगे तो अपने राजा की इस कृपा को देखकर वे सब और भी अच्छे हो जायँगे। अतएव देश को विदेशियों की शक्ति से बचाने के लिए इस प्रकार की सेना की बड़ी आवश्यकता है। और यद्यपि स्विस और स्पेनी पैदल सेनाएँ बहुत भयंकर समझी जाती हैं तो भी वे दोष से खाली नहीं हैं और यदि एक तीसरे प्रकार की सेना बनाई जाय तो वह उनका केवल सामना ही नहीं कर सकेगी किन्तु उन्हें परास्त भी कर सकेगी। क्योंकि स्पेनी पैदल सेना घुड़सवार सेना के सामने नहीं ठहर सकती और स्विस पैदल सेना अपने समान ही दृढ़ निश्चयवाली सेना का सामना करने से डरती है। इसका परिणाम यह है कि स्पेनी सेना फ्रांसीसी घुड़सवार सेना के मुक़ाबले में नहीं ठहरती और स्विस सेना को स्पेनी सेना हरा देती है। स्विस सेना की पराजय का कोई अच्छा उदाहरण तो नहीं मिलता किन्तु रैवना की लड़ाई में स्पेनी सेना ने जर्मन बटालियनों को, जो स्विस प्रणाली से लड़ती हैं, हरा दिया था। इस युद्ध में अपनी शारीरिक फुर्ती और जिरहबख़्तर की सहायता से, जर्मनों की पंक्ति में घुस गये और वहाँ उन्होंने जर्मनों पर ऐसा आक्रमण किया जिससे वे अपनी रक्षा नहीं कर सके और यदि जर्मन घुड़सवारों ने उनपर हमला न किया होता तो वे जर्मन पैदल सेना को बिलकुल ही नष्ट कर देते। अतएव इन दोनों तरह की पैदल सेनाओं के दोषों को देखकर एक तीसरे

प्रकार की सेना तैयार की जा सकती है जो घुड़सवारों का सामना कर सके और दूसरी पैदल सेनाओं से न घबड़ाये। और यह काम नई सेना बनाने से नहीं होगा किन्तु इसके लिए सेना का संगठन ही बदलना पड़ेगा। ये बातें ऐसी हैं जिनके करने से नये राजा की कीर्ति बढ़ती है और उसका प्रताप प्रकाशित होता है। अतएव इटली को स्वतन्त्र करने के लिए इस मौक़े को हाथ से न जाने देना चाहिए। इटली के इस स्वतन्त्रकर्ता से विदेशियों से पीड़ित प्रान्तों के निवासी जो प्रगाढ़ प्रेम करेंगे, उनका मैं वर्णन नहीं कर सकता। विदेशियों के अत्याचार के कारण वे प्रतिहिंसा की अग्नि से जल रहे हैं, वे अपने उस स्वतन्त्र करनेवाले को कितनी गहरी राजभक्ति, कितने अगाध प्रेम और कृतज्ञता के कितने आँसुओं से स्वागत करेंगे, उनको बखानने की मुझमें शक्ति नहीं है। कौन व्यक्ति होगा जो हर तरह से उसकी सहायता न करेगा? कौन लोग उसकी आज्ञा का पालन न करेंगे? कौन व्यक्ति उससे ईर्ष्या करने की हिम्मत करेगा? कौन सा अधम इटालियन उससे विरोध करेगा? यह जङ्गली पराधीनता हर एक आदमी को विष के समान मालूम हो रही है। न्यायपूर्ण काम करने के लिए जो साहस और आशाएँ मनुष्य में उत्पन्न होती हैं, ईश्वर करे कि उस साहस और आशा के साथ आपका घराना इस काम में अग्रसर हो, जिससे उसके झण्डे के नीचे रहकर हमारी प्यारी जन्मभूमि स्वतन्त्र होकर अपना मस्तक उठा सके, और उस घराने की छत्रछाया में पैट्राकं की यह वाणी फलीभूत हो कि—

नीच क्रोध के हो विरुद्ध वीरत्व खड़ा हो जावेगा।
और युद्ध का फल जल्दी ही यहाँ प्रकट हो जावेगा ॥
क्योंकि इटेलियन लोगों की प्राचीन वीरता विश्रुत है।
निश्चय उनके हृदयों में वह हुई नहीं अब तक मृत है ॥

— —

लिए पशुओं के मारे जाने के विषय में भी जहाँ तहाँ, मनुष्यों के स्वास्थ्यादि की दृष्टि से कुछ रुकावट पैदा की जाती है।

विचार की आवश्यकता—इसमें मुख्य कारण मनुष्यों का स्वार्थ है। जिन पशु-पक्षियों से मनुष्य अपना कोई और अधिक हित होता नहीं देखता, उन्हें मांस के लिए मारने में संकोच नहीं किया जाता। उनके शिकार या वध के लिए प्रायः राज्य की ओर से कुछ मनाही नहीं होती। कितने ही स्थानों में दूध देनेवाले और कृषि आदि का कार्य करनेवाले पशुओं के मारने में भी नागरिकों को 'स्वतंत्रता' होती है। आवश्यकता है जिन स्थानों में खाने की पर्याप्त सामग्री मिल सकती है, कम-से-कम वहाँ तो लोग शाकाहारी या निरामिषभोजी बनें। निस्सन्देह मनुष्यों के संस्कार जल्दी नहीं बदलते; जिन लोगों को मांस खाने की आदत पड़ गयी है, उनकी यह आदत, चाहे यह उनके लिए हानिकर ही क्यों न हो, सहसा नहीं छूट सकती। परन्तु गम्भीर विचार और दृढ़ प्रयत्न करने से, यह कुछ असम्भव भी नहीं है।

विश्वबन्धुत्व—अस्तु, हम उस उज्ज्वल भविष्य की आशा करते हैं, जब नागरिकों की दया का क्षेत्र मनुष्य जाति तक ही परिमित न रहेगा, वरन् पशु-पक्षी आदि भी, उसके प्रेम के अधिकारी बनेंगे। निर्बल छोटे-छोटे जानवर मनुष्य को कातर दृष्टि से अपने भक्षक के रूप में न देखकर उसे अपना रक्षक मानेंगे। मनुष्य यह समझ जायँगे कि हमें पशुओं पर जो शासन प्राप्त है, वह इसलिए नहीं कि उन्हें दुख दें या मार डालें, वरन् इसलिए कि हम उनकी सेवाओं का उचित उपयोग करें। जिस प्रकार मनुष्य एक-दूसरे के सहयोग से लाभ उठाते हैं, उसी प्रकार पशुओं के सहयोग से लाभ उठाया जाय। कुछ मनुष्य ऐसे भी होते हैं, जिनसे हम सहयोग नहीं कर सकते, तो भी उनका वध ठीक नहीं समझा जाता; इसी प्रकार जिन पशुओं का हम कुछ और उपयोग न कर सकें, उनके भी जीवित रहने में हमें बाधक न बनना चाहिए।

विकासवाद के वैज्ञानिक सिद्धान्त से भी यह निश्चय हुआ है कि मनुष्य एवं अन्य प्राणियों में घनिष्ठ सम्बन्ध है; सब एक शृंखला में बँधे हैं, एक ही यात्रा के पथिक हैं। सब की माता एक है; पृथ्वी माता ने सब का भरण-पोषण हुआ है। विविध धर्म हमें यही शिक्षा देते हैं कि यह सब सृष्टि परमात्मा की बनायी हुई है। वह सब प्राणियों का परम पिता है; उसे ब्रह्मा कहें, या अल्लाह, खुदा या 'गाड' आदि नामों से सम्बोधन करें। इस प्रकार मनुष्य एवं अन्य प्राणी सब परस्पर में भाई-बन्धु ठहरे। परमात्मा से सब का पितृ-भाव और पृथ्वी से मातृ-भाव है, तो मनुष्य को सब प्राणियों से उदारता, प्रेम और दया का व्यवहार करके अपना आदर्श न केवल मनुष्य मात्र से, वरन् प्राणी मात्र से भ्रातृ-भाव रखना चाहिए। जब ये बातें होंगी, तभी मनुष्य इस सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी होगा। प्रिय पाठको! क्या वह समय नहीं आयेगा! अवश्य आयेगा।

ग्यारहवाँ अध्याय

नागरिक आदर्श

"सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम्"

किसानों का आदर्श—इनका आदर्श मनुष्यों (तथा उपयोगी पशु-पक्षियों) के लिए ऐसे पदार्थ उत्पन्न करना है, जिनसे वे भली भाँति जीवन निर्वाह कर सकें। इन्हें सदैव यह जानते रहने का प्रयत्न करना चाहिए कि उन्नत देशों में कृषि की पद्धतियों में क्या-क्या उन्नति हुई, और हो रही है; और उससे कहाँ तक लाभ उठाया जा सकता है ? उन्हें अपने रहन सहन आदि की उन बातों में भी समुचित सुधार करते रहना चाहिए, जो उत्पादन कार्य में बाधक हो।

मजदूरों का आदर्श—आजकल मजदूर, मजदूरी (वेतन) के रूप में कीमत लेकर अपनी काम करने की शक्ति, निर्धारित समय के लिए, पूँजीपतियों के हाथ बेच देते हैं, और इस प्रकार उतने समय के लिए वे खरीद और बिक्री की चीज बन जाते हैं। मजदूरों को यथासम्भव स्वतंत्र कारीगर बनने का यत्न करना चाहिए। जब उन्हें दूसरों की अधीनता में काम करना ही पड़े तो उन्हें पूँजीपतियों की ओर से होनेवाला कोई ऐसा व्यवहार सहन न करना चाहिए, जिससे उनके आत्म-सम्मान को धक्का लगे, या उनके स्वास्थ्य आदि में बाधा पहुँचे। हाँ, उन्हें अपना कार्य यथाशक्ति परिश्रम और ईमानदारी से करना चाहिए।

व्यापारियों और दुकानदारों का आदर्श—इनका आदर्श यह होना चाहिए कि सर्वसाधारण को भिन्न-भिन्न आवश्यक पदार्थों की प्राप्ति में सुविधा हो। वे अपने परिश्रम के फल-स्वरूप साधारण मुनाफा लें, यह उचित ही है; परन्तु खरीददारों की अत्यन्त आवश्यकता या विवशता का विचार करके अथवा दुर्भिक्ष की सम्भावना देखकर उनका अपरिमित, मनमाना, अंधाधुन्ध मुनाफा लेना अपने सहयोगी नागरिकों के साथ अन्याय करना है।

बहुत से व्यापारी अकेले या मिलकर केवल अपने स्वार्थ को लक्ष में रखकर किसी पदार्थ को एकदम इतनी मात्रा में खरीद कर

जमा कर लेते हैं कि बाजार में उसका अभाव होने लगता है; तब वे उसमें से थोड़ा-थोड़ा निकाल कर खूब मँहगा बेचते हैं। यह अनुचित है। इसी प्रकार विदेशी सामान, मादक द्रव्य, या विलासिता की वस्तुओं का प्रचार भी बुरा है।

अनेक दुकानदार अपनी चीजों के दाम निर्धारित करके नहीं रखते, खरीददारों को उनसे ठहराना पड़ता है। चतुर आदमी को एक चीज जिस दाम में मिलती है, भोले-भाले आदमियों को उसी पदार्थ के दाम बहुत अधिक देने पड़ते हैं। यह वास्तव में दुकानदारी नहीं है, धोखाधड़ी है। विवेकशील नागरिक को ऐसा काम भूलकर भी न करना चाहिए।

नीतिज्ञ, योद्धा, और व्यवस्थापक का आदर्श— इन लोगों को चाहिए कि अपने सामने सदैव स्वाधीनता का आदर्श रखें। वे बराबर यह सोचते रहें कि उनके किसी काम से, या उनके क्षेत्र में जनसाधारण की किसी क्रिया से कोई बात देश को पराधीनता की ओर लेजानेवाली न हो। जहाँ इसकी आशंका हो, वे तुरन्त उसका समुचित उपाय करें। अपने ही देश की नहीं, अन्य देशों की स्वाधीनता की भी यथाशक्ति रक्षा करना उनका काम है। मानव जाति तथा मनुष्य-स्वभाव की रचना इस प्रकार की है कि जो कोई दूसरों को कष्ट देता है और उन्हें पराधीन बनाने या बने रहने में सहायक होता है, वह बिना-जाने स्वयं अपने भविष्य को बिगाड़ता है, अपने लिए कष्ट और पराधीनता को आमंत्रित करता है।

रहती हैं। अतः इन्हें हर समय अपना कर्तव्य-पालन करने के लिए, कटिबद्ध तथा सावधान रहना चाहिए। इन्हें अपनी योग्यता या शक्ति से यथासम्भव दूसरों का कल्याण करने की भावना रखनी चाहिए, अपने व्यक्तिगत स्वार्थ-साधन की नहीं।

आविष्कारकों और वैज्ञानिकों आदि का आदर्श—इनका आदर्श होना चाहिए, ज्ञान। ये जनता के हित के लिए नये-नये तत्वों की, नयी-नयी सच्चाइयों की खोज करें। परमात्मा की सृष्टि में ज्ञान का अनन्त भंडार भरा पड़ा है। इतनी वैज्ञानिक उन्नति होजाने पर भी किसी को यह कहने का साहस नहीं हो सकता कि अब कुछ और आविष्कार करने का आवश्यकता नहीं रही। न कोई यह ही अभिमान कर सकता है कि इस विषय को मैंने पराकाष्टा तक पहुँचा दिया है, आनेवाली पीढ़ियों में कोई आदमी इससे आगे नहीं जा सकेगा। धैर्य, दृढ़ता और विनम्रता पूर्वक, प्रत्येक आविष्कारक को अपना कार्य करते रहना चाहिए।

निस्संदेह वे लोग इनके साथ बड़ा अन्याय करते हैं, जो इनके आविष्कारों की सहायता से दूसरों पर अपनी धाक जमाने और उनका धन शोषण अथवा प्राण-हरण आदि का काम लेते हैं।

कवि, चित्रकार आदि का आदर्श—कवियों, चित्रकारों, गवैयों, मूर्ति-निर्माण करनेवालों, और खेल-तमाशे दिखानेवालों का आदर्श मनोरंजन और सौन्दर्य है। परन्तु इसका अनर्थ नहीं किया जाना चाहिए। वेहूदा शृंगार रस की गज़लें, स्त्री-पुरुषों की क्रीड़ा के लज्जा-जनक दृश्य, नंगी मूर्तियाँ सौन्दर्य प्रगट नहीं करतीं; वे अपने बनानेवाले के बिगड़े हुए दिल की घोषणा करती हैं। वे इस सृष्टि के सर्वश्रेष्ठ कहे जानेवाले प्राणी अर्थात् मनुष्य के लिए कलंक हैं। वास्तविक सौन्दर्य स्वास्थ्य और स्वाधीनता में है। एक तन्दुरुस्त हट्टा-कट्टा बालक कितना सुन्दर मालूम होता है, स्वेच्छापूर्वक कलकल

करती हुई पहाड़ी नदी की धारा कितनी मनमोहक है, देखते ही बनती है। सेवा और त्याग का भाव भरनेवाली और मुर्दों में भी संजीवनी शक्ति का संचार करनेवाली कविता के लिए हम क्या कुछ अर्पण न कर देंगे ? अस्तु; कवियों, चित्रकारों आदि को चाहिए कि सर्वसाधारण के लिए मनोरञ्जन की सामग्री जुटाते हुए, वास्तविक सौन्दर्य की वृद्धि का निरन्तर ध्यान रखें।

धर्मोपदेशकों का आदर्श—प्रत्येक धर्म के आचार्य और उपदेशक आदि का आदर्श जनता में समानता और भ्रातृभाव का प्रचार होना चाहिए। दुख का विषय है कि भिन्न-भिन्न धर्माधिकारी इस विषय के सिद्धान्त को मानते हुए भी अपने अनुयाइयों में इसका समुचित प्रचार नहीं करते। उन्हें चाहिए कि सर्व साधारण को स्पष्ट रूप से खूब समझाते हुए यह शिक्षा दें कि सब मनुष्य एक परम पिता की सन्तान हैं, सब बराबर हैं; काले गोरे का, हिन्दू और मुसलमान या ईसाई का, एशियाई अफरीकी या योरपीय आदि का कोई भेद-भाव अनुचित है, अन्याय है, अधर्म है। यदि वे इस प्रकार की शिक्षा या उपदेश दिया करें तो वे नागरिक जीवन को अधिक सुखमय बनाने में सहायक हो सकते हैं। अवश्य ही, इसके लिए उन्हें निर्लोभी, निरहंकार और निर्भय होना चाहिए। क्या उनके ऐसा होने की आशा न की जाय !

उपसंहार—इसी प्रकार अन्य नागरिकों के आदर्शों का विचार किया जा सकता है। प्रत्येक नागरिक का आदर्श अपनी परिस्थिति के अनुसार आत्म-विकास के साथ, दूसरों की सुख-समृद्धि, सदाचार, ज्ञान दान, स्वाधीनता, मनोरंजन, भ्रातृभाव और समानता का प्रचार आदि में से कोई एक या अधिक होना चाहिए। ये सब सद्गुण सत्य, शिव (कल्याण) या सौन्दर्य के ही भिन्न-भिन्न रूप हैं; इन तीनों में से एक की भी न्यूनता होने से यह सृष्टि अधूरी रह जाती है। इसलिए कि

इन आदर्शों द्वारा इस सृष्टि को पूर्ण बनाने में सहायक हों। संसार-यात्रा में सहयोग की आवश्यकता है। प्रत्येक नागरिक, अपने साथ दूसरों की भी भलाई का लक्ष्य रख कर सब के लिए हो, तथा सब नागरिक समष्टि रूप से नागरिकों की व्यक्तिगत उन्नति का पथ प्रशस्त करनेवाले हों। इस प्रकार प्रत्येक सब के लिए, और सब प्रत्येक के लिए हों; और नागरिक शास्त्र का वास्तविक उद्देश्य पूरा हो।

पहला अध्याय

कर्तव्याकर्तव्य विचार

"किं कर्म किमकर्मेति कवयोऽप्यत्र मोहिताः"

[बड़े-बड़े विद्वानों को भी इस विषय में भ्रम हो जाता है कि कौनसा कार्य करने योग्य है और कौनसा नहीं करने योग्य है।]

—भगवद्गीता

हम दिन-रात कुछ-न-कुछ, भला या बुरा कार्य जानकर या अन-जाने करते ही रहते हैं। बिलकुल निष्क्रिय रहना हमारे लिए असम्भव है। परन्तु कौनसा काय हमारे करने का है और कौनसा नहीं करने क है, अथवा, कर्तव्य और अकर्तव्य की पहिचान किस तरह की जाय,

यह जानना सहज नहीं है। इस विषय में भिन्न-भिन्न विचारकों ने अपने-अपने मत प्रकट किये हैं। हम उनके सिद्धांतों का कुछ परिचय देकर, यह बतलाएँगे कि कौनसा सिद्धान्त कहाँ तक मान्य है, और किसमें क्या कमी है। पहले हमें विविध कार्यों के मूल कारणों के सम्बन्ध में कुछ विचार कर लेना चाहिए।

हमारे कार्यों के कारण—हमारे जितने कार्य स्थूल जगत में दिखायी देते हैं, वे पहले सूक्ष्म रूप से हमारे मन में हो चुकते हैं। हम इस बात का प्रायः विचार नहीं करते अथवा जान लेने पर भी भूल जाते हैं। परन्तु तनिक विचार करने पर स्पष्ट हो जायगा कि हमारा प्रत्येक कार्य हमारी विविध मानसिक क्रियाओं का परिणाम होता है। उदाहरण के लिए मुझे भूख लगी है मुझे भोजन की आवश्यकता प्रतीत होगी। मेरे मन में उसे प्राप्त करने की इच्छा होगी। यदि भूख कम है तो सम्भव है भोजन-प्राप्ति की इच्छा जहाँ की तहाँ रुक जाय। परन्तु यदि भूख बहुत लगी है तो यह इच्छा बढ़कर कामना बन जायगी। यदि भोजन को प्राप्त करना मेरी शक्ति से बाहर है या मुझे यह विचार होता है कि भोजन लेने का मुझे अधिकार नहीं है तो इन बाधाओं का विचार करके मैं उस कामना को नियंत्रित करूँगा, उसे दबा [illegible] लूँगा। परन्तु यदि ऐसी बाधा नहीं है, अथवा प्रस्तुत कठिना[illegible] सामना करना, और उन्हें हल करना मैं समर्थ समझता [illegible] भोजन की प्राप्ति का निश्चय या संकल्प करूँगा और फिर प्र[illegible] उसे प्राप्त करूँगा।

कार्य भला या बुरा होता है, पाप और पुण्य मन से होते हैं, न कि शरीर से। जो कार्य शुद्ध मन से किये जाने पर अच्छा कहा जाता है, वही बुरे भाव से किये जाने पर बुरा हो सकता है।

कर्तव्याकर्तव्य का निर्णायक—अब हम यह विचार करते हैं कि कोई कार्य कर्तव्य है या अकर्तव्य, इसका निर्णय किस प्रकार किया जाय। इस विषय में तीन मत हैं—कुछ सज्जनों का मत है कि कर्तव्य सम्बन्धी शंका का निवारण धर्म-ग्रन्थों से किया जाय, दूसरों का मत है कि हमें अपने अन्तःकरण या सदसद्विवेक बुद्धि ('कान्शेन्स') के अनुसार चलना चाहिए। तीसरा मत यह है ऐसे नियम निश्चित होने चाहिएँ, जो हमारे कर्तव्याकर्तव्य का निर्णय कर सकें। हम इन तीनो मतों का क्रमशः विचार करते हैं।

धर्म-ग्रन्थ—इसमें सन्देह नहीं कि प्रत्येक देश में, वहाँ के धर्म-ग्रन्थों में लोगों के कर्तव्याकर्तव्य का विचार हुआ है। विशेष समय और परिस्थिति में, धर्म-ग्रन्थों में प्रतिपादित विचार उचित और हित-कर भी प्रमाणित हुए होंगे। परन्तु समाज परिवर्तनशील है। जो बात किसी खास समय में उसके लिए उपयोगी हुई, वही पीछे बहुत अनिष्ट-कारी हो सकती है। फिर, जब किसी देश में भिन्न-भिन्न परस्पर विरोधी धर्मों के माननेवाले रहते हों तो यह स्वभाविक ही है कि जब उन पर किसी एक धर्म के सिद्धान्तों का भार लादा जाता है, तो समाज में विकट संघर्ष और अशान्ति हो जाती है। संसार के इतिहास में, धर्म के नाम पर किये गये अत्याचारों के अनेक उदाहरण मिलते हैं। हम पहले कह आये हैं कि नागरिकों को, जहाँ तक वे दूसरों के कार्य में बाधक न हों, धर्म के विषय में स्वतंत्रता रहनी चाहिए; जिस धर्म को उनकी बुद्धि स्वीकार करे, उसे ग्रहण किये जाने में किसी को बाधक न होना चाहिए। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि धर्म-ग्रन्थ, चाहे वे अपने-अपने क्षेत्र में जितने उपयोगी हों, किसी मिश्रित या मिली-जुली समाज के कर्तव्या-कर्तव्य के निर्णायक नहीं हो सकते।

सदसद्विवेक-बुद्धि—कभी-कभी जब हम कोई बुरा काम करने लगते हैं तो हमारे भीतर से उसका निषेध करनेवाली आवाज-सी आती हुई मालूम होती है; हमारा अंतःकरण या हमारी सदसद्विवेक-बुद्धि हमें आदेश करती है कि यह कार्य नहीं करना चाहिए। परन्तु यह बुद्धि न तो सब आदमियों में समान होती है और न किसी एक व्यक्ति में ही हर समय समान रहती है। ज्यों-ज्यों कोई आदमी कु-संगति में रहने आदि के कारण किसी बुरे काम को करने की क्रिया दोहराता है, त्यों-त्यों उसे उसके करने का अभ्यास होता जाता है; यहाँ तक कि फिर उसे अपने भीतर से उसका विरोध होता हुआ मालूम ही नहीं होता। चोर, हिंसक और लुटेरो आदि की सदसद्विवेक-बुद्धि प्रायः जाती रहती है। इससे स्पष्ट है कि सदसद्विवेक बुद्धि लोगों में भिन्न-भिन्न परिमाण में होती है तथा बदलती रहती है; इसलिए कर्तव्या-कर्तव्य के निर्णय करने में यह पथ-प्रदर्शक नहीं मानी जा सकती।